कोऽहम्

संतोष सांगड़ा

सस्नेह भेंट
8899602874

संतोष सांगड़ा

कोऽहम्

संतोष सांगड़ा



हाइब्रो पब्लिकेशन्ज़
बाड़ी ब्राह्मणा, जम्मू

KOHAM

by

Santosh Sangra

ISBN : 978-93-92612-19-0

Published by
Highbrow Publications
78/11, Near Pahlwan Food Mall
Bari Brahmana, Jammu

e-mail
highbrowpublications25@gmail.com

Printed at
Classic Printers, National Highway
Bari Brahmana, Jammu-181133
Mobile : 94191-49293

Books Printed
200 copies

Price
₹ 350

Publication Year
2021

Designed and Set by
Vinay Sharma

समर्पण



मेरे आंगन को अपनी
किलकारियों से रिक्त कर
सदा के लिए
परम तत्त्व में विलीन प्रिय
मानसी सांगड़ा
की अमूल्य स्मृतियों
को समर्पित।

–संतोष सांगड़ा

भूमिका

निबंधावली : को अहम्

ओम गोस्वामी

यदि किसी के मन मस्तिष्क में विचारों के झंझावात वात्याचक्र के समान नर्तन करते हों और अंतस में मूल्यांकन की कंदील प्रकाशमान हो तो जीवन के जटिलसूत्र स्वतः सुलझने लगते हैं। इन सुलझे हुए वैचारिक सूत्रों का परिपाक शब्दों का आश्रय पाकर ''को अंह'' के रूप में सामने आता है। संश्लेषण-विश्लेषण की पद्धति तथा पैन्नी अंतदृष्टि से जीवन के जो-जो दृश्य स्पष्ट होते हैं, वे निबंधों के आकार में ढल जाते हैं। ''विचार औषध'' के पश्चात् वे तमाम वैचारिक ऊहापोह को ''को अंह'' संग्रह पुस्तक के रूप में दृश्यमान हो पाए हैं।

इस निबंधावली में जीवन के गूढ़ रहस्यों, मानव-जीवन के अस्तित्व की प्रासंगिकता तथा विरोधाभासों एवं विसंगतियों पर से पर्दा उठाने का भरसक प्रयत्न किया जाता है। किंतु, इस कार्यविधि में मूल विषय अर्थात् ''जीवन'' को एकाधिक स्थान पर परिभाषित एवं व्याख्यायित करने का प्रयास उपलब्ध होता है। लेखिका सुश्री सांगड़ा का चिंतन-मनन प्रकृत रूप से दार्शनिक प्रश्नों से गहरे जुड़ा हुआ दिखाई पड़ता है। भारतीय मनीषियों तथा पाश्चात्य जगत के नामवर दार्शनिकों ने ''जीवन क्या है''-इस जटिल प्रश्न पर गहराई से चिंतन किया है। इस निबंधावली की लेखिका ने भी उसी परंपरा में जीवन के विविध पहलुओं पर यथोचित चिंतन किया है। इस प्रयास में उन्होंने पोर्वात्य के संग पाश्चात्य उद्भावनाओं का यथा-वांछित अनुसरण किया है। ''जीवन कहां है'', ऐसा ही आरंभ बिंदु है।

"जीवन प्रसाद है सौगात है", इस संग्रह का ऐसा भाव-प्रवण निबंध है, जिसमें जीवन के विविध दार्शनिक पहलुओं पर सटीक चर्चा की गई है। इसका कलेवर अर्थात् बहिरंग विचार है, तो इसकी अंतरंग प्राणवायु संवेदना और भावना है। इस संग्रह के निबंधों में मानवतावाद का अनुपम दिग्दर्शन निहित है। अपने हृदय-पटल पर चिंतन की बौछार को जल-बुदबुदों की भांति उमगने वाले विचार-कणों को सुश्री सांगड़ा ने शब्दों के रूप में ढाला है। इस चिंतन-धारा में वेदांत-चिंतन की धारा का प्रभाव बेहद स्पष्ट है। जीवन के विभिन्न पक्षों से संबद्ध भाव-कणों को सादगी भरे अंदाज में एक अलग शीर्षक के अंतर्गत प्रस्तुत किया गया है। भारतीय मनीषा की इंद्रधनुषी आभा बिखेरते इन भाव-बिंदुओं में अनेक स्थलों पर मौलिक प्रस्थापनाएं भी सामने चली आई हैं।

अपने कथन को पुष्ट करने हेतु लेखिका ने प्रत्येक निबंध में अनेक प्रेरक-प्रसंग उद्धृत किए हैं, जिससे प्रस्थापना में प्रसाद गुण की यथेष्ट अभिवृद्धि हो पाई है। धर्म, अध्यात्म, दर्शन से संबद्ध मूल स्त्रोतों के उद्धरण कथन की प्रामाणिकता को द्विगुणित कर देते हैं। धर्म ग्रंथों से उद्धरण तथा महापुरूषों के कथन इन निबंधों की आधारभूमि को विश्वसनीय बना देते हैं।

मानवता को महानता के शिखर पर पहुंचाने के लिए दूरदृष्टि, चरित्र और चलन के सामंजस्य की आवश्यकता है। इसका उद्बोधन इन निबंधों में दिखाई पड़ता है। जटिल मानव-व्यवहार को बेहद सुपाच्य शब्दावली में समझाने का सतुत्य-कार्य इन निबंधों में संपन्न हुआ है। उदाहरण के लिए यह वाक्य देखें-"किसी भी ऊंचाई पर पाँव नहीं पहुंचाते, संकल्प पहुंचाता है। संकल्प की स्थिति और महत्व पर इस निबंध में बेहद सकारात्मक चर्चा की गई है। एक और उदाहरण देखें-"जितने ऊंचे पहाड़ हैं, उतनी ही परेशानियां हैं, पर पहाड़ अडिग है। हिम्मत रखना, दृढ़ निश्चय से खड़े रहने का संकल्प लो, हिम्मत करो।" आदि।

संकलित निबंधों का उद्देश्य प्रकृति-परमेश्वरी के सन्निधान से उच्च मानवीय-मूल्यों के गुह्य-अर्थों का उद्घाटन करना भी है। इसी माध्यम से ईश्वरीय सत्ता के अन्वेषण का सद्प्रयास भी हुआ है। जीवन की लय में प्रेम की समरसता का परिपाक भी हुआ है। विद्वेष एवं टकराव के बजाए सामंजस्य एवं समायोजन को प्रश्रय दिया गया है। विचारों के उतार-चढ़ाव में विषयगत प्रकाशस्तंभों के समुचित संदर्भ दिए गए हैं। गीता, उपनिषद, बाईबल, कुरान के हवाले, महापुरूषों के कथन तथा कथा-वाचकों द्वारा सुनाई गई कहानियों का आश्रय इन निबंधों को रोचक तथा पठनीय बनाता है। आस्था के डगमगाते कदमों की आहट "दशा दिशा या दुर्दशा" शीर्षक रचना में स्पष्टतया सुनाई पड़ती है।

निबंध-रचना में निजता का आभास भर कर तथा प्रामाणिक अनुभवों को चित्रित करके, लेखिका ने मानो रोचक भाव-बिंबों का मोहक सृजन कर ड़ाला है। "शारीरिक श्रम में ही सौंदर्य निहित है"-शीर्षक निबंध में ऐसे ही आपबीती वाले अनुभव निबंध के सौंदर्य में अभिवृद्धि करते दिखते हैं।

"प्रेम द्वार है परमात्मा का"-इस निबंध में प्रेम को ज्ञान भक्ति का साध्य और ईश्वर प्राप्ति का मूलाधार बतलाया जाता है। यदि कोई ज्ञानवंत है या समर्पित भक्त है, किंतु प्रेम से शून्य है अथवा उसके जीवन में प्रेम को स्थान नहीं मिला तो वह ज्ञान, भक्ति या ईश प्राप्ति के अध्यवसाय में कभी सफल नहीं हो सकता। इस निबंध में मानो कबीर की एतद्विषयक अवधारणा को परिलक्षित किया गया है-

"यह तो घर है प्रेम का,
खाला का घर नाहीं
सिर कटार भूईं धरे,
तब पैठे, घर माहीं।"

प्रेम ईश समर्पण की निशानी है। इसी प्रेमासिक्त का भारतीय अध्यात्म-दर्शन में बेहद गुणानुवाद किया गया है।

''वसंत'' शीर्षक निबंध इस संग्रह का अत्युत्तम निबंध है। यद्यपि कतिपय अन्य निबंधों में भी प्रेम की महत्ता का व्याख्यान किया गया है, किंतु इसे निबंध में एक स्थल पर इसे हृदयहारी ढंग से बखाना गया है। उदाहरण-''स्त्री-पुरूष साथ-साथ रह रहे हैं और इसी को प्रेम समझ रहे हैं। यह सरासर धोखा है। साथ रहना भर प्रेम नहीं है। किसी तरह 24 घंटे गुज़ार देना प्रेम नहीं है। ज़िंदगी गुज़ार देना भी प्रेम नहीं है। प्रेम की पुलक और है। प्रेम की प्रार्थना भी और है। प्रेम की सुगंध और है। प्रेम का संगीत भी और है'' ...आदि। गद्य के ऐसे रमणीय टुकड़े अन्य निबंधों में भी उपलब्ध है। वर्णन की ऐसी गहनता तभी संभव है। जब अनुभवों का सोता विषय-वस्तु बनकर, हृदय से फूट रहा हो। इसी संग्रह का एक अन्य उत्तम निबंध ''लक्ष्य'' है। इसकी विषय वस्तु एवं शैली, रचना को पठनीय बना देती है।

धर्म-इस निबंध में धीर-गंभीर संदेश उपलब्ध होता है। इसमें धर्म के शाश्वत अर्थ की पुनर्स्थापना की गई है। लेखिका धर्म और अध्यात्म क्षेत्र को शुद्ध स्वर्ण मानती है। उसके कथानुसार-''हिंदू राजनीति का नाम है। मुसलमान, सिख सब राजनीति के नाम हैं। धर्म बड़ी अलग बात है।'' लेखिका अनेकता में एकता का अन्वेषण और वकालत करती है। इसी कारण उसका दृष्टिकोण है कि मिठाइयां चाहे कितने रूप ले लें-किंतु, मिठास सब में एक है। भक्ति शक्कर (चीनी) है, उसके बिना कोई मिठाई नहीं बनती। दुनिया के सारे धर्म, अलग-अलग मिठाइयां हैं...भक्ति प्राण तत्व है।'' इस गंभीर भाव-सूत्र को थाम कर लेखिका ने मानवता के संवाद को प्रोत्साहित किया है। वह वास्तविक अर्थों वाले धर्म को समझने और अनुगमन करने को मानव का कर्त्तव्य मानती है।

आत्म अनुसंधान-इस निबंध-रचना में मनुष्य के व्यवहार और विचार को उसका भोजन कैसे प्रभावित करता है-इस विषय पर भी आंशिक चिंतन किया गया है-''कुछ लोग इसलिए बीमार है कि भरपेट भोजन नहीं मिलता, और कुछ लोग अधिक भोजन के कारण मरते हैं। उचित-अनुचित आहार हमारी दिनचर्या को भी प्रभावित करता है''-इस बिंदु पर भी समुचित विचार किया

गया है। वे निद्रा के हनन को हानिकर मानते हुए कहती हैं-''जिस दिन बिजली को इजाद किया, उसी दिन से नींद की हत्या हुई।'' निंद्रा को समुचित रूप से धारण करने वाले ऋषि-मुनियों ने ब्रह्ममुहूर्त में बड़े-बड़े ग्रंथों की रचना की।

''**प्रेम द्वार है परमात्मा का**''-इस निबंध में ज्ञान और भक्ति के अंतर पर प्रकाश डालने के उपरांत प्रीति के महत्त्व को स्पष्ट किया गया है। निचोड़ यह कि यदि प्रेम बड़ा हो तो सारा ब्रह्मांड करीब चला आता है-पड़ोस बन जाता है।

''बहिरंग'' शीर्षक निबंध में कुछेक अद्‌भुत प्रतीत होने वाले तथ्यों का सत्यान्वेषण किया गया है। लेखिका के शब्दों में जितने अवतार पहचाने गए हैं, उनको विभूति जाना। जो पहचाने गए, वे प्रसिद्ध हो गए। बहुत से अवतार पहचाने नहीं गए।'' यह कथन अति मूल्यवान है, साधारण नहीं। सदियों के विस्तार में विश्व-पटल पर ऐसे कल्याणमूर्ति लोगों की कभी कमी नहीं रही, जिन्होंने जन-जन के कल्याण हेतु सर्वस्व अर्पित कर दिया, किंतु वे अज्ञात बने रहे। वे अवतार पुरूषों की श्रेणी में परिगणित नहीं हुए। उनके जीवन का उद्देश्य चुप रहकर दूसरों का भला करना था।

''को अंह''-मैं कौन हूं-इस प्रश्न पर प्रत्येक ज्ञानवान व्यक्ति चिंतन-मनन करता है। कोई आत्म-मनन द्वारा इस गहन गंभीर प्रश्न के गरूर में उतरता है तो कोई जोखिम उठाए बिना दूसरों की इस विषय (''को अंह'') की क्या परिभाषा है के बारे में जानने को उत्सुक रहता है। वह लिखित-प्रकाशित पुस्तकों और संभाषण के माध्यमों का लाभ उठाते हुए, इस प्रश्न संबंधी खोजबीन करता है। मानव के अस्तित्व के विषय में प्राचीन काल से चिंतन होता आया है। लेखिका सुश्री सांगड़ा का कथन है कि ईश्वर ने उसे आत्म-चिंतन के लिए बनाया है। उन्होंने मनुष्य को ऐसी किताब माना है जिसे पढ़ने की कोशिश उसे स्वयं करनी है। इसी प्रयास से उसे इस जटिल प्रश्न का उत्तर मिलेगा।

''चाबी'' शीर्षक निबंध में सुश्री सांगड़ा लेखिका में भिन्न, एक ऐसी भूमिका में नज़र आती है जिसमें वे किसी साध्वी उपदेशिका के रूप में निस्पृह कोण से भिन्न-भिन्न पक्ष सामने लाती है। ''जीवन का दीया'' इस पुस्तक का अंतिम निबंध है। इसमें भारतीय ज्ञान-मेधा का सार-संक्षेप उपलब्ध होता है। लेखिका के शब्दों में-''यह ज्ञानी का परम लक्षण है कि वह कर्म करता हुआ भी किसी से लिप्त नहीं होता।'' यह पंक्ति मानो उपनिषद रूपी किसी स्वर्ण-कलश से उठाकर, इस निबंध के रूप में व्याख्यायित कर दी गई है।

जीवन का सार, जिसे लेखिका ने बेहद सादा शैली में पाठक के समक्ष रखा है बड़ी सक्षम प्रस्थापना है-''भीतर जानना है, आने को ही जानना है कि मैं कौन हूं।''

इस संग्रह के प्रायः प्रत्येक निबंध में लेखिका ने किसी ऋषिका एवं उपदेशिका की भांति पाठक-वर्ग को संदेश दिया है कि क्या करणीय है और क्या अकरणीय। ''जीवन कहां है'' में एक स्थल पर उसका कथन रूपी उपदेश है-''मत देखें दूसरों की आंखों में कि आप क्या हैं ? वह आपकी दिखावट है, वह हमारा नाटक है।...जीवन भीतर है। जो बाहर देखता है उसकी आत्मा कभी पैदा नहीं होती।'' (पृष्ठ-35)

सुश्री संतोष सांगड़ा ने निबंधों के माध्यम से जो संदेश पाठक के समक्ष रखे हैं वे एक मुहावरे या कहावत की भांति प्रभावकारी है। ऐसी भाषा-रचना से निश्चय ही भाषा समृद्धि को प्राप्त होती है। ऐसे कुछ गद्यांश प्रस्तुत हैं। इनसे न केवल लेखिका की भाषाई सामर्थ्य उजागर होती है, बल्कि उसकी विषय पर पकड़ भी प्रकट होती है :-

- कर्मों को कुशलतापूर्वक करो ताकि आपके कर्म हस्ताक्षर बन जाएं (आओ आंगन बड़ा करें)
- जीभ पर नियंत्रण हो, तभी घर टिकता है। (वही)

- गृहस्थी में रहकर कुल-धर्म का पालन करने वाली औरतें ही घर को मंदिर बना देती हैं (वही)

- जीवन बहुत न्यायपूर्ण हैं। हमें उतना ही मिलता है जितने की हम योग्यता अर्जित करते हैं (शारीरिक श्रम)

- छोटी सोच और पैर की मोच आगे नहीं बढ़ने देती (आत्म-विस्मृत)
- बड़ी सोच और बड़ा लक्ष्य आदमी को बड़ा बना देता है। (वही)
- मनोबल अर्थबल से बड़ा बल है (गुरू, ऋषि, विज्ञानिक)
- आत्म-विश्वास सफलता की चाबी आपके पास है। इसके लिए गुरूओं को प्रणाम करो (वही)

संदेश के रूप में लेखिका ने अनेक स्थलों पर मानवीय व्यवहार का सुचारू उपदेश दिया है। यहां कुछ गद्यांश प्रस्तुत हैं :-

(i) ...''इसलिए कोई एक दिन रख लो। जब आप मां-बाप का दिन मनाएं। उन्हें अपने हाथों से खिलाएं। मंदिर को समय दो या न दो, पर अपने मां-बाप को समय अवश्य दो।'' (झुकने की कला)

(ii) ...''अगर आपको क्रोध आ जाए तो इसको दबाने की कोशिश मत करो, बल्कि एकांत कमरे में बैठकर क्रोध पर ध्यान दीजिए। क्रोध को पूरा देखिए, समझिए कि क्यों और कहां पैदा हुआ ?...क्रोध आ जाए तो सौभाग्य समझिए और जो आदमी आप में क्रोध ला दे उसदा धन्यवाद कीजिए कि उसने आपको मौका दिया है। आपके भीतर एक ताकत जग गई। एकांत में बैठकर उसे पहचानिएं'' (कुनकुने लोग)

सुश्री सांगड़ा ने अपनी लेखनी के माध्यम से सत्यान्वेषित विरोधाभासों को सुचारू रूप से रेखांकित किया है। ''आत्म विस्मृत'' के समाहार में उनका कथन है-''जिंदगी तो एक तलवार चलाना है, पश्चिम के लोग अंधेरे में ही

तलवार चलाए जा रहे हैं और पूरब के लोग बिना तलवार के दीया हाथ में लिए खामोश बैठे हैं। दोनों ही रो रहे हैं।'' इस निबंध रचना में लेखिका ने आत्म-विस्मृत भारतवासियों की ओर विशेषतया इंगित किया है। क्योंकि ये जीवन की विसंगतियों और खतरों की अनदेखी करने की सदियों पुरानी रुग्णता से ग्रस्त हैं।

इस पुस्तक की भूमिका लिखने के आग्रह के साथ ही सुश्री सांगड़ा ने यह बात विशेष रूप से कही कि इस बार आप प्रूफ़ों का संशोधन न करें। इससे मैं जान सका कि मेरे समय की बचत के लिए उन्होंने प्रूफ़ संशोधन का वैकल्पिक प्रबंध कर लिया है। इसके लिए भी उनका विशेष आभार।

''को अहं'' शीर्षक इस निबंध संग्रह में और विषयों पर भी निबंध उपलब्ध हैं, यथा ''भारत की संस्कृति'' ''बहिरंग'' आदि। हमें पूरा विश्वास है कि जम्मू प्रांत में हिंदी के उन्नयन के लिए जो उन्मेषकारी प्रयास हो रहे हैं, उनमें इस पुस्तक का विशेष योगदान माना जाएगा। इसके साथ ही यह कहना भी आवश्यक प्रतीत होता है कि विदुषी लेखिका को अपनी मातृभाषा में भी ऐसे निबंध प्रकाशित करवाने चाहिए, क्योंकि अपनी पूर्व प्रकाशित पुस्तकों द्वारा वे डोगरी भाषा पर अपना पूर्ण अधिकार सिद्ध कर चुकी हैं। शुभमस्तु!

ooo

KOHAM

What a liberation to realize that the 'voice in my head' is not who I am. 'Who am I, then?' The one who sees that.

Eckhart Tolle, German thinker

Thousands of thinkers have asked themselves, 'Who am I?' and some have done so quite brilliantly. American actress Julie Newmar realised that it is easier to know others than to know oneself. She famously said, 'Who am I, really? I prefer to leave that up to the observer, because I will never finish answering that.'

Mrs. Santosh Sangra has gone deeper into the question, by looking at it from at least as many angles as there are chapters in this perceptive book, which is about human existence itself. She has tried to uncover the secrets of life by showing us scenes from life and then analysing them.

The book, with its humanistic philosophy, high human values and roots in Indian culture, has several inspiring passages that motivate the reader. For instance, the author points out that real beauty lies in the sweat of one's brow, in diligent physical labour.

Mrs. Sangra's easy familiarity with different religionsgives the book depth, makingit an interesting read and makes a case for the unity of mankind across diverse religious traditions.

She also differentiates between devotion and religious faith on the one hand and the grouping of people into religious identities for political purposes on the other. Devotion and prayer, she points out, is the essence and basic ingredient of all religions. However, she underlines the difference between knowledge and devotion, especially devotional love, which has the power to bring the entire universe to the doorstep of the devout.

The next question is, What is love? For one, the author points out, love is the door through which we can walk towards God. However, not all avatars and prophets find recognition, during their own lifetime or even at all.

The author also examines the extent to which food influences behaviour and thinking. An excessive consumption of food moulds people as much as a shortage of food does. Appropriate as well as inappropriate foods similarly shape human minds.

Emphasising the importance of sleep in our lives, the author astutely observes that the invention of electricity killed sleep.

The title of the book, Who am I?, is a question that has engaged philosophers and thinkers through the ages. The author'sresearch and conclusions are based on literature published since ancient times as well as on her study of human beings,because each person is a treatiseon the subject.

The author's starting point is the question, "Where is life [located]?" Her answer is: Life resides within you. Those who seek it outside themselves are souls that were never born. Mrs. Sangra looks at different aspects of life and in her simple, lucid style concludes that life is a gift, a blessing.

Ko Ahem abounds in insightful aphorisms. The following are some of her best observations:

Life is just. We get only what we deserve.

What makes families stable? It is essential to control one's tongue. Female householders who follow the traditions and principles of their clan tend to convert their homes into temples.

Petty thinking and sprained feet prevent us from moving forward. (This one is one of my favourites.)

Self-confidence is the key to success that everyone has. Therefore, we should honour our teachers.

A person's deeds are his signature. Therefore, we should perform our actions with care and to the best of our abilities.

Suppress your anger. Meditate upon it in a solitary room. Ask yourself: Why did my anger arise? Thank the person who made you angry because he gave you the opportunity to awaken powers that lay dormant within you.

Ko Ahem is a spiritual self-help book that summarises the corpus of Indian knowledge and learning and the author speaks with the wisdom and authority of the ancient sages.

Parvez Diwan

कोऽहम्

शोपनहावर जर्मन का बहुत बड़ा फिलासफर था। उसने कहा कि मेरे जीवन में एक महत्वपूर्ण घटना घटी। एक दिन सुबह सुबह मैं पार्क में टहलने के लिए गया। जब वहां पहुँचा तो मैंने घड़ी देखी शायद 3 बजे थे। गेट बंद था। सोचा वापिस चला जाऊँ, फिर मैंने गेट खटखटाया - पार्क के चौकीदार ने कहा, कौन हो तुम ? कहां जाना है ? क्या लेने, करने आये हो। अपना परिचय दो कि कौन हो तुम ? मैं सोचने लगा इतने वर्षों से मैं इस बात को खोज रहा था कि मैं कौन हूँ ? कहाँ से आया हूँ ? कहां जाना है वो भी नहीं पता, किसलिए आया हूँ। वो भी नहीं जान सका। जाना कहां है नहीं पता। हमने 2-4-6 चक्कर बना के रखे हैं पर पहुँचना कहीं नहीं - जो चीजें इकट्ठी करके रखी हैं उनको भी शायद भोगना भी है या नहीं। मैंने सोचा कहीं मैं भटक तो नहीं गया। चौकीदार ने ठीक ही कहा, क्या करने आये हो ? कौन हूँ मैं ?

वो गुरू के पास गया प्रश्न पूछने कि मैं कौन हूँ। गुरू ने देखा और कहा कि कौन हो तुम ? उसने कहा यही तो पूछने आया हूँ कि मैं कौन हूँ और आप पूछते है कि मैं कौन हूँ ? गुरू ने कहा - जब आप अपने आप को पहचानने लगे हो तो दिखाई दे रहा है कि मैं वह नहीं हूँ मैं पूर्ण यात्रा करने आया हूँ। आत्म चिन्तन करो गोल गोल रिश्तों में घूम रहे हो। थोड़ा ऊपर उठने की कोशिश करो। हमारा जीवन एक अद्भुत अनवरत संघर्ष में हमारे अंत:करण में प्रश्न उठते हैं कि हम अपने बारे में कितना जानते हैं, विचारों की उथल पुथल में हम समझ नहीं पाते कि कौन हैं हम ? क्या मैं देह हूँ ? या विदेह हूँ। इसलिए आपको जान लेना चाहिए जानना जरूरी है कि रोज

रोज सीखना पड़ता है। दूर दृष्टि रख कर चला परिवर्तन देखने के लिए बदलना, सोचो वक्त बदल रहा है। थोड़ा बदलो नहीं तो तुम्हारे अंदर वासापन आ जायेगा। ऋतुयें बदलती हैं नदी बदलती है स्नान करते समय नदी बदलती है। नदी की धारा बदल रही है। पहला पानी निकल जाता है। दूसरा आ जाता है। इस जगत में सब कुछ बदल रहा है। तुम्हारी अवस्थायें बदल रही हैं। मनुष्य के जीवन में अनेक समस्यायें पहेलियां हैं। जीवन के रहस्य हैं। एक पहेली यह भी है कि कौन हैं हम! मेरा सच मूल क्या है। क्योंकि देह बदलती है। जब विकास हो तो देह का बदलता रूप कि मैं क्या हूँ-कोऽहम् ? समझ नहीं पाते। अज्ञानता बड़ी बाधा है। जीवन के दुख अज्ञानता की कोख में पलते हैं। संशय से विकास रुक जाता है। पहला साधन है भ्रमण करना, वेद ऐसा कहते हैं। मैं उपासना हूँ। आस्था का परिचय भारत के ऋषियों ने दिया, उपासना क्या जो ऊपर वाले के निकट ला दे और ले जा कर अपने सत्य का परिचय करवा दे। जगन्ननाथ ने जगत बनाया जगत की उत्पत्ति की कि तुम मनुष्य हो। प्रत्येक ग्रंथ यही दर्शाता है कि मनु की प्रकृति यही कहती है कि "कोऽहम्"। शास्त्र कहते हैं कि अपने से पूछो अपनी सत्ता को ढूँढ़ो। राम कथा कहती है कि हम अवा हैं। वेद कहते हैं-जानकारी हो अपने को जानो। हमने सबके पते लिख रखे हैं पर अपना पता नहीं। सबसे पहले अपना पता लिखो जो अपने आपको कि कौन हो ? कहां से आये हो ? कहाँ जाना है ?

खोजो अपने आपको पहचानो। गहरे में जा कर खोजो। बाल्टी कुएं में उतरती है तो भर कर ही निकलती है। मन को जानिए। मन नहीं जानता कि कितना कुछ चाहिए। मृगमरीचिका में जल ढूंढ़ता है इसी तरह सांसारिक सुख को जान सकते हैं। क्या सही है, क्या गलत है। हमारी सोच कैसी है। हम केवल अपना शरीर बुन रहे हैं। हम Self Product हैं अपने आप को अद्भुत बना रहे हैं। भगवान् ने हमें मनुष्य बनाया आत्मचिन्तन करने के लिए। हम अपने विचारों को उत्तम कैसे बनायें। मनुष्य को जन्म के साथ दो चीजें दे दी हैं कर्म की स्वतंत्रता। जो करना है करो। सोच ले जो सोचा है हमारे

अंत:करण में प्रश्न उठते हैं कि हम अपने बारे में कितना जानते हैं। विचारों की भिनभिनाहट में हम समझ नहीं पाते कि कौन, क्या है। अपने संबंध दर्पण में देखते हुए हम स्वयं समझ लें यही दर्पण है जिसमें अपना अध्ययन कर सकते हैं। संबंधों के दर्पण में आपको यह सारे जवाब मिल जायेंगे-आप मानव जाति की गाथा हैं। आप ही वह किताब हैं, जिसमें अपने बारे में सब कुछ पढ़ सकते हैं। उसके लिए किसी दार्शनिक की जरूरत नहीं है। आप स्वयं उस किताब को पढ़ सकते हैं कि जो कि आप स्वयं ही हैं। जब तक आप इसको ध्यान से नहीं पढ़ते। इसकी सारी अर्थ घटनाओं को इसमें जारी सारी क्रिया कलापों को नहीं सुनते तब तक मन में हमेशा द्वंद्व चलता रहेगा कि मैं कौन हूँ ? प्रश्नों की बौछार होती रहेगी।

संतोष सांगड़ा

विषय सूची

शारीरिक श्रम में ही सौन्दर्य निहित है

इन्सान की सोच कभी खत्म ही नहीं होती। कभी कभी वह इससे खुद ही परेशान हो उठता है। उसका बस चले तो वह इसका गला ही दबा देता किन्तु सोच तो ग्रहों के सामान होती है। किसी के वश में नहीं होती बल्कि व्यक्ति खुद उसके वश में होता है, थोड़ा भी उल्टा सीधा करे तो वह उसे शिकंजे में कस लेती है, ग्रहों की तरह जो खुद भी अपने घेरे के शिकंजे में कसे रहते हैं और उससे थोड़ा भी बाहर होते ही अपना अस्तित्व खो देते हैं। इन्सान सोचता है अपने अतीत के बारे में अतीत को छिपाने के लिए, अपने वर्तमान को सुरक्षित रखने के लिए, भविष्य को सुन्दर बनाने के लिए। यह अनोखी बात नहीं है। मनुष्य हमेशा अपने अतीत को छिपाता आया है, अपने भविष्य को उसने उज्जवल करना चाहा है अपने भविष्य को उज्जवल करने के लिए आकर्षक होना बहुत जरूरी है और आकर्षण सौंदर्य में है। सौंदर्य के प्रति समस्त प्राणी आकृष्ट होते हैं। वृद्धावस्था में भी सुन्दर दिखना चाहिए भले ही बाल सफेद ही हो जायें परन्तु त्वचा में लावण्य तो बना ही रहना चाहिये। आजकल सौंदर्य की परिभाषा को लेकर मानव भ्रमित है। सौंदर्य वह नहीं है जो बाहर से पोता जाये। असली सौंदर्य भीतर से बाहर की ओर टपकता है।

आप चौंकिए मत, में कोई Beautician नहीं हूं मेरा कोई Beauty Parlour भी नहीं है। न ही कोई योगा Yoga Centre है न ही किसी पत्रिका में सुन्दरता के लेख लिखे हैं। जो कुछ भी है जिसे महसूस कर रही हूँ जिस भीड़ को भागते देख रही हूँ वही लिख रही हूँ। एक दिन मैटाडोर में बैठी थी। भीड़ अधिक थी और मैं जल्दी में थी, मैं क्या? सभी जल्दी में ही बस

पकड़ने की कोशिश में जहां भी जगह मिलती हैं घुसने की कोशिश करते हैं। एक महिला मेरे आगे खड़ी हो गई। खुशबू का झोंका पूरी मेटाडोर में फैल गया। कुछ एक दो सीटें खाली हुईं। वह देखती परखती जांचती रही। फिर मेरे पास वाली Seat पर बैठ गई। एक बार फिर खुशबू का समुद्र मेरे पास लहराने लगा। उसके जिस्म पर चार्ली या हो सकता है 2-3 इत्रों को मिला कर अपने जिस्म पर छिड़क दिया हो। वह दूर थी खुशबू अच्छी लग रही थी नजदीक आने पर खुशबू तीखी। इतनी तीखी जैसे सूई की नोक। मुझे तीखी खुशबू अश्लील लगने लगती है। फूल एक खिलें या हजारों उनकी खुशबू तीखी नहीं होती। लेकिन यह औरत फूल नहीं थी। एक औरत थी, जिसके तन पर खुशबू थी-एक इश्तहार की तरह। वह खुशबू ऐसे फड़फड़ा रही थी जैसे आधा फटा इश्तहार। मैंने ध्यान से देखा औरत की आंखों पर गहरे रंग का चश्मा था-काले चश्मे के भीतर से उसने मुझे देखा, फिर बैठ गई। 'रबिश रोडवेज बस'। मेरी मारुति में कुछ Problem थी। Auto कर लेती। मैंने धीरे से कह दिया। मेरी बात में तल्खी नहीं थी। एक ठंडापन था। उसने देखा और चश्मा उतार कर मुझे घूरा। लेकिन सच तो यह है कि उसके भीतर का कालापन, खोखलापन अभी भी रोशनी की हथेलियों पर गिर रहा था।

फूल को देखो तो उसकी सुंदरता विकार रहित होती है जिसको देख मनुष्य के मन में विकार नहीं होता, वासनाओं और ज्वालाओं को नहीं भड़काता बल्कि पवित्रता और शांति का संचार होता है। आजकल तो कला के नाम पर भी जिस सौंदर्य का प्रदर्शन किया जा रहा है, वह मानव के आचार-व्यवहार भावना सबको दूषित कर रहा है। कला वह है जो मानव को काबिल बनाये और मन में मानवता की भावना उत्पन्न करे और सुंदर वह है जो स्वस्थ है। स्वास्थ सुंदरता का निवास स्थान है तन से पहले मन को सुन्दर होना बहुत जरूरी है। जो प्राणी जितना निर्मल है उसके अन्दर उतनी मात्रा में सौंदर्य बसता है। आत्मा जीवन है तो शरीर जीवन पात्र, देही और देह जितने निर्मल होंगे सौंदर्य, उनमें उतनी ही मात्रा में निखार लायेगा। और सुंदरता लाने के लिए

शारीरिक श्रम बहुत जरूरी है। शारीरिक श्रम, ध्यान और काम.. यह तीनों औषधियां जो मेरी समझ में आती है हो सकता है कि मेरी सोच में कमी हो। आप सहमत हैं भी कि नहीं अगर जीवन मिला है तो शरीर मिला है, और उस शरीर में हम जी रहे हैं तो काम भी करना पड़ेगा। काम करेंगे तो निखार भी आयेगा। नींद आयेगी, खाना पचेगा, समाज का उद्धार होगा। लेकिन हम जीवन के एक हिस्से को काम की चट्टान के नीचे दबा देंगे तो तनाव पैदा होगा दिलो दिमाग में एक कशमकश हर समय होगी, हीन भावना का शिकार होंगे... फिर इस तनाव को दूर करने के लिए उल्टे सीधे काम करेंगे... पैसे की ओर दौड़ लगायेंगे... धीरे धीरे काम के प्रति एक नफरत मन में इकट्ठी होती चली जायेगी और जीवन मौत का साया बन कर रह जायेगा। लेकिन काम को हमने न जाने किन किन अवधारणों से जोड़ दिया है। जात-पात से प्रतिष्ठा से आकांक्षाओं से। हमें इस बात का ध्यान ही नहीं रहता कि इन बंधनों से इन झूठी प्रतिष्ठाओं से जुड़कर अपने भीतर की ऊर्जा से हम वंचित रह जाते है।

हमारा शरीर संस्थान हमें पशु जगत से मिली विरासत है। अच्छा है कि पशुओं को प्रकृति ने बुद्धि नहीं दी है नहीं तो वे भी अपना काम करने के लिए नौकर रखते। दूध देने वाली गाय नीची जात की गाय से या दूध न देने वाली गाय से कहती जा मेरे लिए घास ले आ। मैं यहीं बैठ कर घास चरुंगी। हमारे शरीर की संरचना इस तरह से हुई है कि उसे स्वस्थ रहने के लिए मेहनत चाहिए। वह एक यंत्र है। जिसे उपयोग नहीं करेंगे तो कलपुर्जे जंग खा जायेंगे। शारीरिक श्रम करना अत्यंत वैज्ञानिक है। शारीरिक श्रम में अपना ही एक सौंदर्य हैं। प्रकृति ने कभी नहीं चाहा है कि थोड़े से लोगों के पास संसार की सारी सम्पदा हो अधिकांश लोग गरीब रहे। गरीब के अपने सुख है प्रकृति के दिये हुये। अमीर के अपने सुख है पैसे से खरीदे हुये। प्रकृति ने चाहा था कि हर कोई काम करे उसने वर्गहीन समाज चाहा था, उसने एक मर्द और एक औरत से इन्सान को पैदा किया था न कि गोरे कालों में। सबको बराबर के हक दिये

उसने गरीब अमीर वर्ग नहीं बनाये। वर्गहीन समाज, जहां सभी काम करें। रोजाना 8 घण्टे कड़ा श्रम करें और गहरी निंद्रा को प्राप्त करें शरीर स्वस्थ होगा तो बुद्धि का विकास होगा। समाज समृद्ध होगा तो एक बड़ी क्रांति आ जायेगी। फिर वर्गहीन समाज के लिए लड़ना नहीं पड़ेगा समाज में कोई वर्ग बचेगा ही नहीं-बेरोजगारी की मांग नहीं होगी। देश के लिए प्राप्त धन होगा-लेकिन नहीं। आज के दौर में इन्सान ताश खेल सकता है। जुआ खेल सकता हैं किसी को आसानी से मार सकता है। राजनीति में आ सकता है। आस्कर अवार्ड जीतने की कोशिश कर सकता है... क्योंकि अहंकार को छोटे-छोटे कामों में रस नहीं, उसकी तृप्ति के लिए उसे बड़े-बड़े नाम वाले कार्य चाहिए। जब कोई जंगल में भटक जाता है और कई दिनों तक उसे रास्ता नहीं मिलता तो उसे आपात्कालीन के तल पर जीना पड़ता है। हमने जीवन को इतना सुरक्षित और सुविधाजनक कर लिया है कि लाखों करोड़ों लोग अपनी भीतर की छुपी ताप (ऊर्जा) को नहीं पा सकते हैं। क्योंकि हम बहुत सतह पर जीते हैं। खाना थोड़ा, काम थोड़ा, मनोरंजन बस इतनी कुल जिन्दगी है। हम अपनी शक्ति को गहराई में ढूंढते ही कहां हैं। मनुष्य की गलत धारणाओं के कारण काम एक कुरूप शब्द बन गया है। काम से जी चुराना तो ऐसे हैं जैसे किसी माली के पास बीज हो पर बोने से इन्कार करें, चित्रकार के पास तूलिका है केनवस है पर चित्र बनाने से बचने लगे। जीवन एक अवसर है खिलने का विकसित होने का। यह धरती एक चुनौती है इससे भागने की कोशिश करना आत्मघात नहीं है? लोग अपना बचाव करते हैं लेकिन यह सारे बचाव उनकी कब्र की दीवारें बन कर उन्हें उसी में दफना देते है। मनुष्य अपने बचाव के कितने उपाय खोजता है। कुछ लोग शब्दों की आड़ में बचते हैं। कुछ हिमालय के मठों में छिपते हैं। कुछ राजनीति का सहारा लेते हैं कुछ संसार में प्रतिष्ठित हो जाते हैं। लेकिन असली काम तो होता हो नहीं है।

समाज की संरचना इस तरह से है कि हर कोई गलत पते पर स्थापित हुआ है अतः (बैठा हुआ है) इसलिए गलत काम कर रहा है। कोई युवती

कलाकार है तो उसे चूल्हे चक्की पर पिसना पड़ता है, कोई युवक एक अच्छा कलाकार है बड़े से बड़ा अभिनय कर सकता है पर मटमैले दफ्तर का Incharge बना बैठा है। हिसाब किताब में मग्न है। कोई संगीत सीखना चाहता है तो एकाऊंट्स में Busy है। सही माने में देखा जाये तो हमारी थकान मानसिक अधिक होती है, शारीरिक कम। हम थकते हैं क्योंकि जो भी काम कर रहे हैं उसमें मन नहीं है, मजबूरी है। फिर मन बचाव के हजार बहाने ढूंढते है इस सारे चक्र से बाहर निकलना बहुत कठिन है-कभी सोचा आपने की छुट्टी के दिन आप क्या करते हैं। काम दुगुना लेकिन काम आपकी मन पसंद का होता है। इसलिए लोग थकते नहीं बल्कि ताज़गी से भर जाते हैं अगर काम आनन्द है तो आपको छुट्टियों की जरूरत नहीं रहेगी। महापुरुष कहते हैं कि सृष्टि ईश्वर की लीला है खेल है तो फिर छुट्टी किसलिए? क्या काम आनन्द नहीं बन सकता... क्या मन की ऐसी दशा नहीं बन सकती कि काम बोझ न हो। हमारे मन-प्राणों में खिलावट हो जैसे कोई फूल खिलता ही जाये। फिर काम आराम और आराम ही विश्राम बन जाये हमारी शक्ति बढ़ती ही जाये और आवश्यक काम के बाद निंद्रा ही विश्राम बन जाये-फिर हमारी Energy बढ़ती ही जायेगी, अन्यथा टुकड़ों-टुकड़ों में जीवन यूं ही काम का महत्व खो बैठेंगे तो जीवन फिर से ऊर्जा से भर जायेगा। लेकिन आज के दौर में मशीनें इन्सान की जगह ले रही है कम्प्यूटर दिमाग की जगह ले रहा है क्योंकि मशीनें इन्सान से ज्यादा कुशल हैं, आज्ञाकारी हैं और बिना छुट्टी के 24 घण्टे काम कर सकती हैं। एक मशीन हजार लोगों का काम कर सकती है।

तब इन्सान क्या करेगा? आराम करेगा। कितना आराम करेगा? जब शरीर को आराम लगता है तो दिमाग दौड़ेगा कितनी गुत्थियां खोलने लग जायेगा... क्योंकि दिन भर की कई बातें थी जो अधूरी छूट गई थी पलंग पर लेटते ही मन उन्हें पूरी करने लग जायेगा फिर नींद नहीं आयेगी-क्योंकि दिमाग इतनी तेजी से काम करता रहा। नींद की जरूरत दिमाग को नहीं शरीर को होती है। अगर शरीर ने काम नहीं किया तो नींद कैसे आयेगी। नींद लाई नहीं जाती

आ जाती हैं। आज करोड़ों लोगों के शरीर बिमारियों से जकड़े हैं कई दवाइयों की दुकानें खुल गई हैं। कभी सोचा आपने कि राजा से बेहतर नींद भिखारी को आती है। गरीब लोग अमीर लोगों से बेहतर नींद सोते हैं। क्योंकि उन्हें रोटी कमाने के लिए कड़ी मेहनत करती पड़ती है और कड़ी मेहनत से वे रोटी ही नहीं गहरी नींद का अधिकार भी पाते है। गरीबों के सुख अलग से हैं अमीरों के अलग। आज की नारी जो अपने घर का काम-काज स्वयं न करके किसी दूसरे से करवाती है और कई तरह की बिमारियों का शिकार हो रही है फिर हीनभावना का शिकार होकर कई तरह के Herbal treatment in Health Centre में कई तरह के व्यायाम... व्यर्थ के व्यायाम कर रहे हैं। जो व्यक्ति रात भर करवटें बदलता रहा वो सुबह सुबह जागिंग के लिए कैसे जायेगा। दौड़ेगा-कितना दौड़ेगा? दौड़ने का मन नहीं होगा-क्योंकि वो काम भी बेमन ढंग से होगा। सही बात यह है कि इन्सान मूलरूप से शिकारी था। जानवरों के पीछे-पीछे दौड़ता था, वो भी बंदूक से नहीं तीर-कमान से, और ऐसा नहीं होता था कि हर बार उसे शिकार मिल जाता था। कभी कभी तो खाली हाथ लौटता था आज भी हमारा शरीर हमसे वही मांग कर रहा है। अब यह हम पर है कि हम कितना शारीरिक श्रम करते है। किस ढंग से करते हैं तब नींद खुदबखुद आ जायेगी। हमारी जीवन की शैली गलत हो गई है। इसे बदलो या फिर पीड़ा भोगो।

आज जगह जगह Health Centre, Medition Centre बने हैं ध्यान केन्द्र 'मेरी समझ में नहीं आता कि अकेले ध्यान से क्या होगा। ध्यान से केवल आधा ही कार्य होगा आधा तो हमें करना है वो है शारीरिक श्रम। ध्यान कैसे किया जाये? क्या ध्यान केवल भगवान का ही करना चाहिये ? ध्यान का अर्थ है, याददाश्त, स्मरण। यह कहना ही न पड़े कि Sorry मैं भूल गया। कार्य सब एक जैसे होते हैं पर करने वाले अलग-अलग है तो कर्म का गुण धर्म ही बदल जाता है। इससे कुछ भी फर्क नहीं पड़ता है कि हम कैसा काम कर रहे हैं, कैसा ध्यान करते हैं। फर्क उससे पड़ता है कि हमारी आत्मा कैसी

है। हमारे कार्य हमारी आत्मा पर निर्भर है हमारी आत्मा हमारे कर्म से नहीं। सारी सुंदरता सारे भेद हमारे मन के भीतर होते हैं वहीं से नूर टपकता है। हमारे दीये के बाहर का शीशा इतना मूल्यवान नहीं होता है। उसके अन्दर जलती हुई ज्योति ही मूल्यवान है। हमारा उठना-बैठना चलना-फिरना यह सब तो ऊपर के कार्य हैं और हमारे हर कार्य से हमारी आत्मा बाहर झांकती है। हमें कर्म का हिसाब नहीं रखना है। हमें हिसाब रखना है भाव का। भाव का हिसाब साफ हो तो ध्यानी ध्यान में लगा रहेगा। तब पायेंगे कि हमारे बाहर के कार्य को निर्मल साफ बना दिया और उनका मूल्य कुछ नहीं होगा। अरे सद्गुरु नानक, ईसा, कृष्णा बड़े-बड़े कार्य नहीं करते थे उनके भाव बहुत ही बड़े और उज्जवल होते थे। जब हम कोई कार्य ध्यान से करते हैं तो उसका 'Charm' चमक कुछ ओर ही होती है। जब अन्दर दीया जलता है तो हमारे चारों ओर एक आभा का मंडल होता है ज्योति से भरा हमारा ध्यान गहरा नहीं है तो हमारा काम भी अधूरा है। मेरे ख्याल से ध्यान काम काज में लगे ही करना चाहिये जो काम हम कर रहे हैं चाहे रोटी पकाते, मटमैले दफ्तर में कुर्सी पर बैठे-बैठे यह साधना उसी समय ही करनी चाहिये अपने काम में ध्यान समझ कर। काम करते जाओ अपने अंतराल पर होश रखो। आप कहेंगे कि कामकाज पर जोर क्यों दे रही हूं। हमारे काम-काज में होश को बार-बार बुलाना पड़ता है। काम भी न रुके और ध्यान भी। हमारे अस्तित्व के दो तल हो जायेंगे। करना और होना।

हमारा कार्य अभिनय है। स्टेज पर मुझे मालूम है कि मैं कौन हूँ? लेकिन अभिनय चल रहा है। रोल कर रही हूं वेश्या का महारानी, नौकारानी या लड़ाकी सास का लेकिन मुझे उस समय भी मालूम होता है कि मैं कौन हूं? मेरा होश मुझ में केन्द्रित होता है लेकिन अभिनय जारी होता है। नाटक में मैंने किसी को जहर देकर मार दिया वो मर गया मुझे कोई फर्क नहीं पड़ा, घर आ कर चैन की नींद सो गई। हमारा पूरा जीवन एक लम्बा नाटक है जिसमें हम अभिनय करते हैं। ऊपर वाले ने पटकथा पहले ही लिखी है मुझे

मां-बहन, बेटी का अभिनय दिया है मुझे करना है और बखूबी से करना है। एक पार्ट जो समाज से परिस्थितियों ने संस्कृति ने देश की परम्परा ने मुझे दिया है। मुझे वे खूबी से करना, निभाना है। उसी में पुरस्कार लेना है। अगर इस रोल में मैं अपने आपको भूली हूँ और उसी भूल को सुधारने के लिए यह विधि है। ध्यान, कर्म और शारीरिक श्रम। हमारे देश की अद्‌भुत कथा रामायण की है। राम के आने से पहले बाल्मीकि ने Script लिखी। राम आये अपना अभिनय करके चले गये एक बड़े रंगमंच पर? राम का आना सब कुछ निश्चित था तो अगर हम समझ लें कि सभी कुछ निश्चित है तो जीवन एक अभिनय बन जायेगा। सभी कुछ निश्चित है, हमारे संवाद, हमारा संभाषण सभी कुछ निश्चित है तो फिर इतनी भटकना क्यों?

जीवन बहुत न्यायपूर्ण है। हमें इतना ही मिलता है, जितने की हम योग्यता अर्जित कर लेते हैं।

ooo

जीवन प्रसाद है, सौगात है

प्रयास है मनुष्य के अहंकार की छाया। प्रसाद है निर अहंकार दशा में उठी सुगंध। प्रयास से मिलता है छूद्र। आदमी की मुट्ठी बड़ी छोटी है। कंकड़-पत्थर बांध सकते हैं। मुट्ठी में तो हिमालय को बांधने चल पड़ोगे। प्रयास से मिलता है क्षुद्र-और प्रसाद से मिलता है विराट कभी कभार आपने भी देखा होगा कि एक पक्षी आपके कमरे में घुस आता है जिस द्वार से आया है, वह खुला है इसलिए भीतर आ सका। द्वार बंद होता तो भीतर न आ सकता और फिर खिड़की से टकराता है बंद खिड़की के कांच से टकराता है चोंचें मारता है और अपने पर फड़फड़ाता है। जितना फड़फड़ाता है, जितना बड़बड़ाता है उतना ही बेचैन हुआ जाता है और खिड़की से टकरा कर लहूलुहान भी हो सकता है। पंख भी तोड़ लेता है। कभी सोचा कैसा मूढ़ है। अभी जिस दरवाजे से आया है और दरवाजा खुला है और वो उस दरवाजे से वापिस जा भी सकता है। मगर बंद खिड़की से टकरा रहा है-ऐसा ही आदमी है। इस जगत में आये हो तुम अपने को लाए नहीं हो। आये हो। वही प्रसाद है, सौगात है। यह जीवन हमारा कर्तृत्व नहीं और न ही कृत्य है। यह दान है यह परमात्मा की सौगात है। यह द्वार खुला है, जहां से हम आये हैं। क्या जन्म लेने के समय परमात्मा ने क्या आपको पूछा था कि महाराज आप आना चाहते हो? न किसी ने पूछा न ताछा। अचानक एक दिन हमने पाया कि आंखें खुली हैं। श्वास चली है। जीवन में सौगात उतरी है। अचानक एक दिन अपने को जीवित पाया। सारे जगत को रस स्निग्ध पाया और चुपचाप हमनें स्वीकार कर लिया। हमने कभी सोचा ही नहीं, निर्णय किया ही नहीं कि यह जीवन प्रसाद में, सौगात में मिला है। यहां से दरवाजा खुला यहां से हम आये है और अब बंद खिड़की पर सिर

मार रहे हैं। पंख तोड़े जा रहे हो और अब उसी में सूत्र खोजो। और ऐसा नहीं है कि हम जब आये थे तब प्रसाद मिला था। भगवान् रोज अपना प्रसाद हमें दे रहा है। यह श्वास जो हमारे भीतर आते जाते हैं। पर हम कहते है कि मैं श्वास ले रहा हूँ। लेकिन क्या सांस लेना हमारे हाथ में होता तो कभी मरेंगे ही नहीं फिर सांस लेते ही चले जायेंगे। नहीं श्वास हमारे हाथ में नहीं है। हमने एक भी श्वास नहीं ली-श्वास हमें ले रही है। यह हमारा कृत्य है एक आध घढ़ी श्वास रोक के देखो कितनी बेचैनी होती है। 'श्वास भीतर आना चाहती है। हम न उसे रोक सकते हैं न ले सकते हैं।' वो तो चल रही है। यही सूत्र है। प्रसाद है, सौगात है। अगर इस अपने जीवन को थोड़ा हम परखें जांचें तो जगह जगह प्राकरण मिल जायेगा। सब हो रहा है। जीवन भी हो रहा है प्रेम भी हो रहा है, श्वास चल रही है। वहां तो परमात्मा ही होगा। परमात्मा क्षुद्र भेंट नहीं देता। परमात्मा की सौगात क्षुद्र नहीं हो सकती। जब धन मिलता है वो हमारी मेहनत हमारे प्रयास से मिलता है। विराट प्रसाद है। हम अपनी मेहनत प्रयास से धन कुर्सी पद के लिए प्रयास करते रहे, हो सकता है कि बड़ा साम्राज्य हो हमारा, सारी पृथ्वी पर राज्य हो हमारा, लेकिन जब मरेंगे तो क्षुद्र दरिद्र बन कर मरेंगे। विराट को पाये बिना कोई समृद्ध नहीं हो सकता। परमात्मा का धन्यवादी नहीं हो सकता। और विराट वही पाता है जिसे सत्य दिखाई पड़ता है कि मेरे लिये क्या हो सकता है। मैं हूँ कहां? मैं नहीं हूँ-ऐसी प्रतीति जिसकी सघन हो जाती है। वहां प्रसाद बरसता है। मनुष्य के जीवन में वह द्वार है, जहां से हम आये हैं और उसी द्वार से जाना हो सकता है। और वह द्वार सदा खुला है लेकिन हम खिड़कियों पर सिर मार रहे हैं। हमें पक्षी को सिर मारते देख कर दया आती है और हम सोचते हैं। बेबकूफ है पागल है। दरवाजे से क्यूं नहीं निकलता। पर हमें अपने पर कब दया आयेंगी क्योंकि आदमी ही ऐसा मूढ़ है-यह कैसे हो सकता है-पर मैं भी नहीं जानती। क्योंकि अगर हम जान लें कि कैसा होता है, तब सफल हो जायेंगे। परन्तु यह जानना भी जरूरी है कि प्रसाद कैसे घटता है हमारे प्रभु का। हम समझ लेते हैं कि आरती के थाल सजा कर दीप मालाऐं करके हमें मिलेगा? विराट तो

नहीं मिलेगा। क्योंकि हम वहां कर्त्ता की तरह मौजूद होंगे.. सो नहीं होगा। वो परमात्मा भीतर उतरता है हृदय में घट जाता है पर जब इन्सान निर-अहंकार घटेगा। मगर निरहंकार के घटने का कोई कारण सबंध आरती उतारने से नहीं है-समझो मीरा को घटा था नाचते नाचते, नाच से नहीं घटा, नाचते घटा, प्रगट हुआ भीतर-सोचने वाली बात है कि क्या हम भी नाचेंगे तो घट जायेगा? नहीं। मीरा से भी बेहतर नर्तकियां है दुनियां में मगर उन्हें नहीं घट रहा है। नाच से घटता होता, तो जो अच्छी तरह नाचता है। उसे पहले घट जाता। मीरा को घटा, उसके नाच में कुछ ज़्यादा नाच जैसा था भी नहीं-अनगढ़ था मगर घटा। कारण कोई नहीं था पर नाचते नाचते खो गई-अहंकार गिर गया। नृत्य रहा नर्तक विदा हो गया-और जहां (मैं) नहीं रही, वही घटा-बुद्ध को बिना नाचते घटा मंसूर 'अनहलक' कह उठता। जब "तुलाधर को" तराजू तौलते तौलते घटा था। राजा जनक को सिहासन पर बैठे बैठे घटा था कृष्ण को संसार के मध्य में घटा, महावीर को संसार से हटने पर पहाड़ों की कंदराओं में नग्न खड़े-खड़े घटा महाबुद्ध की पत्नी ने पूछा जिसको पाने की तलाश में वन में गये थे क्या वो मिला। बुद्ध ने कहा जिसे पाने गया था उसका परिचय अनुभव अब हुआ। जिन को घट गया, वे भी नहीं जानते थे कि कैसे घटा मैं सोचती हूँ शायद जब हम यत्न करते हैं उसको ढूंढ़ते हैं तब चिंता से भरे होते हैं हजार विकल्प उठते हैं मन में विचार उठते हैं मन में किसके पीछे जाऊँ किस शास्त्र को मानूं किस के मंदिर जाऊँ। प्रत्येक व्यक्ति का मूल्य चरम है कोई सिद्धान्त इतना मूल्यवान नहीं। सिद्धांत हमारी सेवा में है शास्त्र हमारे सेवक हैं। हमारे स्वभाव के जो अनुकूल पड़ता वही करना। अगर हमारे स्वभाव के अनुकूल नाच पड़ता हो तो नाचना। हमारे स्वभाव के अनुकूल बांसुरी बजाना पड़ता तो बांसुरी बजाना योग पड़ता है, तो योग करना। हमें जो अनुकूल पड़े मगर अनुकूल की परिक्षा अनुकूल की कसौटी एक ही है। कि हमें सुख मिलें। सुख से मूल्य चुकाओ। याद रखना दुखवादी भीति में न रहे कि दो चार उपवास रख लिए तीर्थ कर लिए शरीर को सता लिया पहुँच जायेंगे स्वर्ग इतना सस्ता भी नहीं है मामला। परमात्मा चोचलों से अपनी जन्नत नहीं देता।

हुआ चार तिनकों का दावा तुमको
कि खुदा ने क्या तुम्हारे हाथ में
जन्नत बेच दी क्या?
परमात्मा प्रत्येक के पास उसके ही ढंग से आता है।

वो सम्मान करता है हमारा अपमान नहीं। जिस मौज में हम होते हैं उसी मौज में वो आता है। पर हमने पुकारा कैसे ? हृदय से पुकारा किस भाषा से पुकारा? इससे कोई सबंध नहीं कि हिन्दी मैं उर्दू में कि संस्कृत में, किसके उपदेश से बुद्ध या महावीर उपनिषद् या कुरान को मान कर पुकारें। इन सब बातों का कोई अर्थ नहीं है। अर्थ सिर्फ एक ही बात का है कि वह हृदय से किया या नहीं। हृदय से पुकारेंगे तो सब भाषायें उस तक पहुँच जाती हैं चाहे टूटी फूटी भाषा ही क्यों न हो। ढोल मंजीरे बजा कर या ऊँची आवाज में अज़ान से भी नहीं सुनेगा शंकराचार्य जी ने क्या गजब की बात कही है कि छोटी सी चींटी के पांव में बंधी पायल की ध्वनि भी तो वे सुन लेता है-(जरा सोचिए चींटी की पायल) क्या हम जब तक हृदय से नहीं पुकारोंगे वो नहीं सुनेगा-'टालस्टाय' की प्रसिद्ध कहानी का सार यूं है-जो मैंने रूसी मैगजीन में पढ़ी थी रूस का सबसे बड़ा पुरोहित था उसे खबर मिली कि झील के पास तीन फकीर रहते हैं उनके चर्चे हर जगह होने लगे, कि वो तीन फकीर पहुँचे हुए हैं बड़े चमत्कार करते हैं। लोगों की भीड़ लग जाती थी। लोग दर्शन करने जाते हैं। उसने सुना कि वो अनपढ़ गंवार किस्म के फकीर हैं। पुरोहित ने यह भी सुना कि उन्हें तो प्रार्थना करना भी नहीं आती फिर भी चमत्कार करते हैं। लोगों की भीड़ लगी रहती है। उसने एक दिन नाव ली और नाव में बैठ कर झील के किनारे गया तो देखा तीनों फकीर एक झाड़ के नीचे बैठे हुये थे-अपनी मस्ती में थे लेकिन मस्ती का कारण भी नहीं दिख रहा था फिर भी आनंद में डोल रहे थे। पुरोहित ने कहा "बंद करो यह डोलना-बोलना। जानते हो मैं कौन हूँ।" उन्होंने कहा हमें कुछ भी पता नहीं कि आप कौन है। आप बताएंगे तो हम जान जायेंगे कि आप कौन है? उसने कहा मैं

सब से बड़ा पुरोहित हूँ 'रूस' का। उन तीनों फकीरों ने उसके चरणों में सिर रख दिया। तब वो पुरोहित निश्चित हो गया कि यह मूढ़ किस्म के आदमी हैं यह चमत्कार क्या कर सकते हैं-और क्या इनको भक्ति आती होगी। लोग व्यर्थ ही इनके पीछे पागल हो रहे हैं। उल्टा यह तो मेरे चरणों में सिर रख रहे हैं। पुरोहित ने पूछा-तुम्हारी क्या साधना है-क्या करते हो तुम जो तुम्हारे पीछे इतनी भीड़ पड़ी है। उन्होंने कहा-अब हम आपसे क्या छुपायें-शर्म आती है बताते हुए। उन्होंने एक दूसरे की ओर देखा और कहा कि भई तुम बताओ व दूसरे ने तीसरे से कहा-मगर कोई भी कहने को राजी नहीं हुआ। आखिर एक ने हिम्मत की। उसने कहा-अब मानते नहीं तो हमें कहना पड़ेगा कि असल में हमें प्रार्थना करना आती ही नहीं है और हमें कोई सिखाने वाला भी नहीं मिला सो हमने अपनी ही प्रार्थना गढ़ ली। हमने स्वयं बनाई है प्रार्थना, सो क्षमा करना आप। फिर भी उस पुरोहित ने कहा, तुमने क्या प्रार्थना बनाई जरा हम भी सुनें। पुरोहित महाज्ञानी नाराज होने लगा कि तुमने प्रार्थना बनाई कैसे प्रार्थना तो चर्च का अधिकार है बनाना। उसका तो ऊपर से निर्णय होता है। तुमने कैसे प्रार्थना खुद बना ली? फिर चर्च की निश्चित प्रार्थना है। क्या है तुम्हारी प्रार्थना वे तीनों एक दूसरे की तरफ देखने लगे। फिर उन्होंने कहा कि अब आप नहीं मानते तो हम आपको कह देते हैं, कि हमने सुना था कि ईश्वर के तीन रूप है, त्रिमूर्ति; या जैसा ईसाई कहते हैं। टिर्निटी उनके तीन रूप हैं। और हम भी तीन ही हैं। तो हमने प्रार्थना बना ली कि 'तुम भी तीन, हम भी तीन, हम पर कृपा करो। वह पुरोहित हंसने लगा उसने कहा, तुम बिलकुल मूढ़ हो। यह कोई प्रार्थना हुई? मैं तुम्हें प्रार्थना बताता हूँ, अब तुम यह हम तीन तुम तीन वाली बंद करो प्रार्थना, यह असली प्रार्थना तुम्हें बताता हूँ। तो अपने ईसाई धर्म की जो स्वीकृत प्रार्थना है, प्रमाणिक है, वहीं कही लेकिन वो तीनों मूढ़ फकीर बोले कि यह तो बहुत लम्बी है और हमारे लिए क्या यह छोटी नहीं हो सकती। पुरोहित बोला यह संक्षिप्त नहीं हो सकती है, इसमें एक भी शब्द नहीं बदला जा सकता न एक शब्द और जोड़ सकते हैं। तो उन्होंने कहा, आप फिर एक दफा और कह दें कि एकदफा और तीसरी

दफा भी कह दें ताकि हमें याद हो जाये इधर पुरोहित बोलने लगा उधर वो तीनों उसे दोहराने लगे। उन्होंने कहा ठीक है हम कोशिश करेंगे।

पुरोहित बड़ा प्रसन्न हुआ कि मैं एक बहुत बड़ा नेक काम करके लौट रहा हूँ। जब वो बीच झील में पहुँचा था कि उसने देखा कि एक बवंडर की तरह चला रहा है कोई। वह तो बड़ा हैरान हुआ कि यह सब क्या है। कोई तूफान नहीं है, कोई आंधी भी नहीं चल रही है फिर यह बवंडर कैसे चला आ रहा है। तब उसने गौर से देखा कि तीनों फकीर पानी पे भागते भागते चले आ रहे हैं। उन्होंने कहा कि रोको रोको। हम भूल गये आपकी प्रार्थना। एक दफा और कह दो वो प्रार्थना, सिर्फ एक दफा और बता दो। तब उस पुरोहित की बुद्धि में थोड़ी बात आई कि जो पानी पर चल कर आ गये इनकी ही प्रार्थना ठीक होगी इनकी प्रार्थना पहुँच गई, हमारी नहीं। पुरोहित ने उनके चरण छुये और कहा, मुझे माफ कर दो। मैंने अपराध किया है। तुम्हारी प्रार्थना पहुँच गई। तुम अपनी प्रार्थना ही जारी रखो। मेरी प्रार्थना भूल जाओ। मैंने बड़ा अपराध किया है, तुम्हारी प्रार्थना पहुँच गई है। तुम मेरी प्रार्थना भूल जाओ, क्योंकि मैं वह प्रार्थना जिंदगी भर से कर रहा हूँ। अभी भी मुझे नाव में बैठना पड़ रहा है। अभी मुझे इतनी श्रद्धा नहीं कि उस प्रार्थना के सहारे मैं पानी में चला जाऊँगा। तुम वापिस जाओ। मुझे माफ करना। मैंने तुम्हारे परमात्मा के बीच बड़ी बाधा डाली मैंने पाप किया।

भाषा का मूल्य नहीं है-न शास्त्र का मूल्य है- हृदय का हार्दिकता का इसलिए कृष्ण कहते हैं कोई किसी ढंग से आये, किसी बहाने से आये किसी भी मार्ग से आये किसी दिशा से आये, सब मुझ तक पहुँच जाते हैं परमात्मा परम शिखर है। पहाड़ पर बहुत से रास्ते शिखर की तरफ जाते हैं तुम किसी भी रास्ते पर चल पड़ो, बस चलते रहना है, पहुँच जाओगे। रास्तों की इतनी मूल्यवत्ता नहीं है जितना लोग समझ बैठे है। चलने वाला ठीक होता या गलत। रास्ते तो बस रास्ते हैं। रास्ते तो मुर्दा हैं। चलने वाला ठीक है या गलत उसके पीछे उसका हृदय होता है। हृदयपूर्वक जो भी किया जाये वह परमात्मा के चरणों में पहुँच जाता है।

जीसस कहते हैं कि जिसके पास है उसे और मिलेगा जिसको और मिलेगा उसे और खोजना पड़ेगा। जो जितना पायेगा उतना ही पायेगा और पाने को शेष है परमात्मा कभी भी अशेष होता ही नहीं। सदा शेष है। उसका दूसरा कोई किनारा नहीं है। नाव छोड़ दो एक दफा-सागर में तो सागर है और सागर और सागर विराट होता चला जाता है। जितनी आपकी हिम्मत बढ़ती है। जितनी पात्रता बढ़ती है योग्यता अर्जित होती उतना ही बड़ा सागर होता चला जाता है।

ooo

जीवन कहां है

मनुष्य जीवन जिसे पाने के लिए वो पैदा हुआ है-क्या वो उसे पा सकता है। कभी कोई एक मनुष्य के जीवन में फूल खिलते हैं सुगंध फैलती है। लेकिन शेष सारी मनुष्यता बिना खिले ही मुरझा जाती है। बहुत थोड़े मनुष्य पैदा होते हैं शेष सारी मनुष्यता की कोई कथा नहीं है। वो सारे बिना किसी सौंदर्य को जाने बिना किसी सौंदर्य के सत्य को जाने ही जीते हैं, और नष्ट हो जाते हैं। करोड़ों बीजों में से अगर एक बीज में अंकुर आये और करोड़ों बीज बीज़ ही रह कर सड़ते हैं और समाप्त हो जाते हैं यह कोई सुखद स्थिति नहीं हो सकती। हम अब तक जो जीवन जी रहे है। वह जीवन नहीं, एक निद्रा है। एक दुख की लम्बी कथा है एक अर्थहीन खालीपन जहां कुछ है, ही नहीं है हमारे हाथों में। जहां हमने कुछ जाना है न कुछ जीया है। मनुष्य का जीवन भीतर से बाहर की तरफ आता है। बाहर से भीतर की तरफ नहीं। एक बीज से अंकुर निकलता है, वह भीतर से आता है। फिर वृक्ष बड़ा होता है, फिर पत्ते और फूल फल आते हैं। उस छोटे से बीज से एक बड़ा वृक्ष खड़ा हो जाता है। कल्पना से परे है कि छोटे से बीज़ में इतना बड़ा वृक्ष छिपा हुआ है। जीवन भी छोटे से बीज से भीतर से बाहर आता और हम जीवन को खोजते हैं बाहर। इसलिए जीवन से वंचित रह जाते हैं। हम जीवन को नहीं जान पाते-जैसे वृक्ष के पत्तों से फल फूलों को देखकर हम अन्दाजा लगा लें कि इनका जीवन यही है। नहीं-वृक्षों के प्राण फल फूल पत्तों में नहीं जड़ों में है जो धरती के भीतर जड़ों में है यहां घोर अंधकार है।

अगर किसी पौधे को उखाड़ कर देखा जाये उन जड़ों को तो आप सोच नहीं सकते है कि जो गुलाव और गैंदे के फूलों को प्राण देने वाली उनकी

सुंदरता खशबू यही जड़ें बरकरार रखती है। यानि प्राण भीतर है फूल बाहर खिलते हैं, जड़ें भीतर हैं। अगर किसी के चेहरे की मुस्कराहट चली जाये। आंखों की रोशनी खो जाये तो उसके हृदय में फूल नहीं लगते और जिंदगी में उदासी आ जाती है। सोचने वाली बात है कि इतने अच्छे मकानों में रह कर भी हम अशांत क्यों हैं। क्योंकि हमने बाहर सम्भाला है, इसलिए आदमी कुम्हला गया है। क्योंकि जिसका भी बाहर होता है, उसका भीतर अनिवार्य रूप से होता है अगर भीतर न हो, तो बाहर नहीं हो सकता है। एक मकान की बाहर कि दीवारें हैं, तो भीतर भी कुछ होगा। भौतिकवादी कहता है कि भीतर कुछ है लेकिन अध्यात्मवादी कहता है अहिंसा मत करो प्रेम बढ़ाओ दया करो। पर यह सब फूल हैं, जड़ें उनमें से कोई भी नहीं है। बल्कि जड़ संभल जाये तो अहिंसा अपने आप पैदा हो जायेगी। जड़ों को सम्भाला नहीं जायेगा तो फूल पैदा होने वाले नहीं हैं। हम बाहर को ही सम्भालते रह जाते हैं। अध्यात्म के नाम पर हम उन लोगों के देखते है जिन्होंने बाहर से अच्छे वस्त्र पहन रखे है। उपदेश देते रहते हैं बाहर से भीतर क्या है सोया हुआ, उसे जगाने की चिंता नहीं है। सच्चा आदमी खोजना बहुत मुश्किल है दुनिया में झूठे अध्यात्मवादी बहुत से हैं। हमने एक झूठा आदमी पैदा कर लिया है। झूठे आदमी का कोई जीवन नहीं होता फिर वही ढील ढौल उसके उजले वस्त्रों में हम उसे सच्चा मानने लग पड़ते हैं। जैसे किसान अपने खेत में एक लकड़ी का स्टैंड बना कर उस पर कुर्त्ता डाल कर मुँह पर कुन्नी यानि हांडी लगा कर उस पर मूंछें लगा कर उसका चेहरा बना देता है। ताकि पकी हुई फसल को जानवर न खायें और फसल की रखवाली भी होती रहे। एक दिन एक आदमी उसको देखकर उसके पास जाता है और उसे पूछता है, तुम सदा इस सर्दी गर्मी में खड़े रहते हो तुम परेशान नहीं होते? तो उस झूठे आदमी ने कहा, नहीं मुझे दूसरों को डराने में मज़ा आता है जब जानवर पक्षी मुझे देखकर डरते हैं क्योंकि वो मुझे सच्चा आदमी समझते हैं जब कि सच्चे आदमी से कोई डरता नहीं बल्कि उस पर ही हमला कर देते हैं। उस झूठे आदमी ने कहा, कि बात तुमने सच्ची कही लेकिन में भी झूठा हूँ लेकिन जब मैं दूसरों

की आंखों में देखता हूँ, कि मैं क्या हूँ? तो बहुत आनन्द आता है तो उस मखोटे ने कहा कि तुम भी मेरी तरह झूठे हो? फर्क इतना है कि मैं बेजान होकर भी सच्चा हूँ। और जानवरों पक्षियों को डराता हूँ, तुम इन्सानों को डराते हो और अपने होने का सबूत देते है। झूठा आदमी हमेशा दूसरों की आंखों में देखता है कि वो कैसा दिखाई पड़ता है। इसका मतलब यह नहीं कि वह क्या है ? उसकी सारी चिंता एक ही है कि वह दूसरों को कैसा दिखाई देता है। लोग क्या कहते हैं? क्या सोचते हैं। वह कभी भी जीवन को उपलब्ध नहीं हो सकेगा। वह आदमी भीतर जो सोये हुये प्राण हैं उसको कभी नहीं जगा पायेगा। वह बाहर से सुंदर मुखौटा लगा कर लोगों की आंखों में भला पढने लगेगा। हम शरीर को बहुत दिखाने में लगे रहते हैं। सज धज कर हम आइने में देखते हैं दिखाते हैं पर भीतर जो हम हैं उसके सामने कभी आईना नहीं रखते। अगर कोई आईना दिखायें तो उसे तोड़ देगें। दुनिया में जिस आदमी ने भीतर के असली आदमी को दिखाने की कोशिश की उसे हम मार डालने की धमकी भी देते हैं। क्यों हमारी नग्नता को खोलकर हमारे सामने रखने की कोशिश करते हो। हम जो हैं, उसे छिपाने की सस्ती तरकीब खोज ली है हमने दान पुण्य यज्ञ चारों धाम की यात्रा करके अराम से बैठ जो गये हैं। ''धर्मराज'' को टीका लगाते हैं, भैयादूज पर कि अब मरने के उपरान्त भाई हम को दुख नहीं देगा। यम यातना से बच जायेगें, नहीं बच पायेंगे। गंगा नहाने से पाप उतर जायेगें। नहीं उतरते जब तक गंगा में डुबकी लगायेंगे पाप भी नहा कर पावरफुल हो जाते हैं पाप तन के नहाने से उतरेंगे नहीं। मन की मैल धोने से उतरते हैं। तीर्थों में जा कर पाप नहीं उतरते। तीर्थ का अर्थ है शरीर रूपी रथ को तीरे लगाना ती-र्-थ इस रथ को तीरे लगाने के लिए कर्मयोगी बनना जरूरी है और वो भी निस्वार्थ कर्म करें। बाकि सब सस्ती तरकीबें हैं अपने आप को तसल्ली देना। हमें हमेशा बाहर से फूल सजाने की चिंता रहती है लोग हमें क्या कहते हैं। अगर जीवन को जानना चाहते हैं और जीवन बदल जाये ऐसी चाहत है, तो हमें भीतर उतरना पड़ेगा। दूसरों की आंखों में मेरी सच्ची असली तस्वीर होगी। जब दुनिया की आंखें मुझ से कहें

कि यह है आप तो वही सत्य हो जाये। तो मेरा होना क्या है मेरी आत्मा क्या है? मेरा अस्तित्व क्या है? फिर मेरा जीवन क्या है? नहीं तो मैं एक झूठ हूँ। एक बड़े नाटक का हिस्सा हूं। जीवन को जानने के लिए समाज से मुक्त होना नहीं है। समाज के ही दर्पण में अपना चेहरा देखना है। उस दर्पण में अपना प्रतिबिंब देखना है।

मत देखें दूसरों की आंखों में कि आप क्या है? वह आपकी दिखावट हैं, वह हमारा नाटक है। एक्टिंग है हम नहीं हैं। जो आदमी अपने भीतर को पहचानना शुरु करता है। उसी के जीवन में बदलाव की आहट आती है उसी क्षण आना शुरू हो जाती है। जीवन भीतर है। जो बाहर देखता उसकी अपनी आत्मा कभी पैदा नहीं होती। उसके जीवन के बीज में कभी अंकुर नहीं फूटते। क्योंकि हमने कभी अपने बीज की तरफ ध्यान ही नहीं दिया। बीज की तरफ अगर आंख जाती तो बड़ा वृक्ष बन सकते हैं।

ooo

बसंत

रामानुज संत के पास एक आदमी आया। उसने कहा, "महाराज मैंने परमात्मा को पाने के लिए बहुत सी प्रार्थनायें की। जप, तप किया पर परमात्मा की एक झलक नहीं मिली कही।" संत ने कहा-"तुम मुझे सच सच बताओ, तुमने कभी किसी से प्यार किया?" उसने कहा, "नहीं, मैं इन झमेलों में पड़ना नहीं चाहता।" संत ने कहा, "तब मैं असहाय हूँ तुम्हारी मदद करने में। परमात्मा तक न प्रार्थनायें पहुँच सकती हैं न धर्म शास्त्र न देवस्थान। एक छोटा सा अनुभव है प्रेम का, अनुभव वही परमात्मा तक पहुँचा सकता है 5 हजार बरसों से।"

आदमी भजन, यजन, तप कर रहा है। मूर्तियों के सामने माथे रगड़-रगड़ कर, मस्जिदों के सामने सिर झुका झुका सिर टेक रहा है, पर परमात्मा की झलक उपलब्ध नहीं हो सकी। कोरी प्राथनायें हाथों में रह गई। आनंद के सपने हाथों में ही रह गये-कारण उन्होंने परमात्मा के द्वार बंद कर दिये हैं। आजकल के धर्मगुरु मनुष्य को मनुष्य से तोड़ने के लिए ज़हर फैलाते हैं। घृणा, हिंसा के आधार और माध्यम बन गये हैं। इस धरा पर जितने युद्ध या उपद्रव हुये पशुओं ने नहीं किये जब कि हिंसक होकर भी वो अहिंसक हैं। जब भी उपद्रव हुये इस धरती पर मनुष्य की अहिंसक प्रकृति ने ही किये हैं। समुद्र ने कभी किसी को पकड़ कर नहीं डुबोया। सांप, बिच्छुओं ने भी उपद्रव नहीं किये जबकि वे हिंसक प्राणी हैं। अगर उन्होंने उपद्रव किये तो अपनी जान बचाने के लिए ही किये, लेकिन मनुष्य ने भगवान् के द्वार बंद कर दिये हैं और परमात्मा के द्वार इसलिए भी बंद हो गये क्योंकि परमात्मा के अनेक

द्वार नहीं हैं एक ही द्वार है और वह द्वार है प्रेम का पर उस तरफ हमारा ध्यान ही नहीं गया समाज की पूरी व्यवस्था अप्रेम की व्यवस्था है। पूरे परिवार का केंद्र अप्रेम का केंद्र है और इसी समाज को इसी परिवार इसी गृहस्थी को हम सम्मान दिए जाते हैं कि बड़ा पवित्र परिवार है। यही गुणगान हमें परमात्मा से मिलने नहीं दे पा रहा है। मनुष्य के विकास में कहीं न कहीं भूलें हुई हैं। बुनियादी भूलें हुई है। कुछ सवाल ये नहीं कि कुछ चंद लोगों ने ईश्वर को पा लिया-कुछ महानुभाव के अंदर कुछ घट गया अनेक संत भी हुये जिनके अंदर प्रभु की ज्योति उतरी है लेकिन चंद लोग जब इतनी बड़ी दुनिया है। जैसे माली एक बगीचे में सौ दो सौ फूलों के पौधे लगा दे और शायद कुछ पौधों से फूल निकल आयें, पर माली की प्रशंसा कौन करेगा। 2, 4 पौधों में फूल आने से उनके खिलने से माली की तारीफ कोई करें या न करें पर बाकी पेड़ तो खबर दे रहे हैं कि माली सुलझा हुआ माली है। इतनी बड़ी दुनिया में चंद लोगों के अंदर ही ज्योति जली और उस ज्योति की प्रशंसा हम सदियों से करते चले आ रहे हैं। अब तक बुद्ध जयंती मना रहे हैं। महावीर की पूजा क्राइस्ट के सामने घुटने टेके बैठे होते हैं। राम, कृष्ण, नानक इन चंद लोगों के अंदर सिवा किसी और में परमात्मा की ज्योति क्यों नहीं घटी। और उनकी स्मृतियां अभी तक हमारे अंदर जिंदा हैं कि हम भूले नहीं उनको ढाई हजार बरसों से। उन्हीं के नामों का सहारा लेकर हमनें उनके नाम पर कई उपद्रव किये हैं मेरा धर्म, तेरा धर्म, कितनी हत्याएं हुई हैं कितना खून खराबा हुआ क्यों? इतने सारे बीज़ जमीन के अंदर पड़े हों और फूल न खिलें मेरे ख्याल से मनुष्य के जीवन का जो केंद्र है-उसमें प्रेम नहीं उपजा। इसलिए जीवन की यात्रा गलत रही। जीवन का केंद्र है परिवार और परिवार खड़ा है विवाह पर। फिर उस विवाह से प्रेम प्रगट करना चाहते हैं लेकिन वो प्रेम प्रकट होने की बजाय बंदी बना देता है परिवार को पवित्र कथाओं से बांध देते हैं। बिना प्रेम के बिना आतंरिक परिचय के बिना एक दूसरे के प्राणों के संगीत के केवल धागों मंत्रों में वेदी पूजा करके दो रूहों को बांध देते हैं लेकिन उनके जीवन में प्रेम पैदा नहीं किया जाता काम पैदा हो जाता है सिर्फ दो

व्यक्तियों के जोड़ से परिवार का निर्माण होता है, प्रेम का नहीं प्रेम का जन्म होता है स्वतंत्रता में, प्रेम का जन्म होता है स्वतंत्र भूमि पर यहां कोई बंधन नहीं। कोई जबरदस्ती नहीं-परन्तु प्रेम तो व्यक्ति का अपना आत्मदान है, बंधन नहीं है। लेकिन सारी दुनिया की मनुष्यता की सभ्यता को प्रेम से वंचित कर दिया है। हम कहते हैं विवाह से भी प्रेम प्रकट होगा, लेकिन वह प्रेम प्राणों से नहीं उठता फैलता नहीं। प्राणों की शक्ति वहां अनुपस्थित होती है। आत्मा का मिलन नहीं होता, देहों का मिलन होता है, सिर्फ देहों का। और हम चिल्लाए जा रहे हैं कि हमारे पुरखों ने बहुत सोच समझ कर इस समाज के आधार रखे हैं। अपनी आत्मा हमारा समाज बहुत महान् है। ऋषि मुनियों ने इसे निर्मित किया है सो गहराई से सोचा जाये तो उन ऋषि मुनियों के समय ऐसे हालात नहीं थे। औरत को पूरी आजादी थी। पराधीन नहीं थी वो, उन ऋषि मुनियों की मार्ग दर्शक बनी वो मदालसा, 'अनुसूइया' बहुत सी औरतें उस समय मदालसा के चारों पुत्र योगी हुए। पैदा होते ही उनके कान में मंत्र फूंकती थी कि तू उच्च्च कोटि की आत्मा हो, प्रभु विराजमान हुये हैं मेरे घर में। उसका एक लड़का राजा बना और युद्ध में हार गया तो युद्ध भूमि में जाकर मदालसा ने ऐसा कान में मंत्र फूंका कि अच्छा शासक बन कर योगी बना। ऐसी अनगिनत औरतें हुई जो अपने पति का मार्ग दर्शन करती थीं। लेकिन जब से स्त्री संपत्ति मानी जाने लगी। जर, जोरू उस पर अपना अधिकार माना जाने लगा पूर्व में जब से स्त्री को जुए में दांव पर लाया तो वो पुरुष की संपत्ति मानी गई। जैसे गो धन, अश्वधन, सोना चांदी ऐसे ही स्त्री धन माना गया और पुरुष मालिक बन गया और स्त्री दासी। गुलाम छाया पति के आगे पीछे घूमती रहने वाली। हिन्दोस्तान की स्त्री में थोड़ी सी अकल होती तो शब्द कोष से स्वामी शब्द निकाल देती-लेकिन उसने चिट्ठी पत्रों में भी लिखना शुरू कर दिया-(आपके चरणों की दासी) कोई पुरुष किसी स्त्री का स्वामी कैसे हो सकता है। और वहां कैसे प्रेम हो सकता है। एक मालिक और दास में प्रेम की सम्भावना समान तल पर होती है। स्वामी और दास में क्या प्रेम होगा? इसलिए भारत में प्रेम की संभावना ही समाप्त हो गई। स्त्री पुरुष साथ-साथ

रह रहे हैं और उसी के साथ रहने को प्रेम समझ रहे हैं। सरासर धोखा है। साथ रहना भर प्रेम नहीं है। किसी तरह 24 घंटे गुजार देना प्रेम नहीं है। जिंदगी गुजार देनी भी प्रेम नहीं है। प्रेम की पुलक और है। प्रेम की प्रार्थना भी और है। प्रेम की सुगंध और है। प्रेम का संगीत और है। पश्चिम में औरतों ने विद्रोह किया और वो विद्रोह गलत रास्ते पर चला गया। गलत रास्ता यानि ठीक पुरुषों जैसा बनना चाहा। सिगरेट शराब मर्दाना लिबास पुरुषों जैसी अभद्र शब्दों का उपयोग करना बगावत है। लेकिन गुलामी ही नहीं तोड़नी है तो गुलामी तोड़ कर कुंये से खाई में गिरने जैसी हालत है। पश्चिम की स्त्रियां जितना पुरुषों जैसी बन रही है उनका अपना व्यक्तित्व खोता चला जा रहा है। भारत में छाया, चरणों की दासी बन कर खत्म हो गई पश्चिम में नं. 2 था पुरुष बन कर खत्म होती चली गई उसका भी अपना व्यक्तित्व नहीं बचता क्योंकि स्त्री के पास अपना अलग व्यक्तित्व है जो पुरुषों से अलग। उसका सारा आकर्षण उसके जीवन की सुगंध उसके अपने होने में है। पूर्व ने जबरदस्ती स्त्री को छाया बना दिया। और पश्चिम की स्त्री अपने हाथ से मेहनत करके छाया बनी। इसलिए पूरब की स्त्री ने अपनी आत्मा का अधिकार ही स्वीकार नहीं किया है आत्मा की आवाज ही नहीं सुनी न ही हिम्मत जुटाई कि कह सके 'मैं भी हूँ' सारे धर्म ग्रंथ पुरुष लिखते हैं अपने हिसाब से लिखते हैं अपने स्वार्थ से लिखते हैं। स्त्रियों का लिखा हुआ न कोई धर्म ग्रंथ है, न स्त्रियों का कोई मनु है न स्त्रियों का कोई याज्ञवल्क्य है स्त्रियों का कोई स्मृतिकार भी नहीं। कोई सूत्र नहीं। स्त्री पुरुष के पीछे आकर पुरुष का अंग बन जाती है। लेकिन पुरुष स्त्री का अंग नहीं होता। स्त्री पुरुष का आधा अंग है लेकिन पुरुष स्त्री का अंग नहीं है। एक एक परिवार में कलह है जिसको हम गृहस्थी कहते है संघर्ष कलह है। कुछ घरों के अंदर स्त्रियां हिस्टेरिट होती चली जाती हैं। फिर तलाक, हलाला बगैरह-बगैरह। मंदिरों में माता की चौकी आई है बाल बिखेर कर सिर घूमाती औरतें दिखती हैं। क्या है वह सब? और हम कहते हैं हमारा समाज बहुत महान् है। प्रेम के अतिरिक्त कोई आदमी स्वस्थ नहीं हो सकता। प्रेम जीवन में न हो तो मस्तिष्क बीमार होगा। चिंता

तनाव से भरा हुआ होगा तो सोचेंगे कि अपने कर्मों का फल है यही जीवन है। और जब जीवन में इतनी पीड़ा दिखाई पड़ती है तो हम अपने गुरुओं-महात्माओं के वचन दोहरा कर मन को तसल्ली देते हैं। कि संसार दुखों का घर है। आसार है इससे छुटकारा पाना चाहिए जीवन आसार नहीं है। यह आसार हमने खुद बनाया हुआ है। जीवन से छुटकारा पाने की बातें सब दो कौड़ी की है। जीवन परमात्मा है जो जीवन में प्रवेश से उपलब्ध होता है। जीवन से भागने से नहीं और भागने से जिंदगी बदलती भी नहीं-मेरी दृष्टि, मेरी सोच में जीवन की शुरुआत यहां से होती है वहीं गड़बड़ हुई है। मनुष्य जाति में प्रेम की उत्पत्ति कैसे हो-पति पत्नी एक दूसरे से बंध तो जाते हैं पर उनके जीवन में शांति प्रेम नहीं है और कलह क्लेश परेशानी में इनजायटी में पति पत्नी के बीच में बच्चों का गर्भधारण हो जाता है और वो बच्चे पैदाइशी विकृत हो जाते हैं। मनुष्य स्वस्थ शांत है पति पत्नी में प्रेम उपजे। जब पति में परमात्मा दिखे पत्नी को पति में परमात्मा दिखे प्रेम भरे रूप में और जब परिपूर्ण प्रेम के आधार पर वो मिलते हैं तो उनका मिलन होता है प्रेम के तल पर-उनके शरीर ही नहीं मिलते उनका मानस भी मिलता है। उनकी आत्मा भी मिलती हो तो एक लयपूर्ण संगीत में डूब जाते हैं फिर दोनों विलीन हो जाते हैं-उस क्षण जो बच्चा गर्भाधान होता है वह बच्चा परमात्मा को उपलब्ध हो सकता है क्योंकि प्रेम के क्षण का पहला कदम उसके जीवन में उठा-तभी बुद्ध, महावीर, नानक, क्राइस्ट, मूसा दो चार फूल पैदा होते हैं जीवन की बगिया में। वासुदेव देवकी कितने बरस काल कोठरी में रहे-उनको तो बेचैन अशांत होना चाहिए था लेकिन उस कोठरी में उनकी आत्मा उनका प्रेम परमात्मा की तरह था-पवित्र। देवकी वासुदेव का कौन से पवित्र प्रेम संगीत मय क्षणों में उनका मिलन हुआ, कि कृष्ण पैदा हुये।

वो कौन से क्षण रहें होंगे माँ-बाप के मिलन भरे जिसमें हलाकू, हिटलर, तैमूर लंग, गजनबी आदि पैदा हुये जरूर इनके जो माँ-बाप जो पति पत्नी आपस में द्वेष से भरे हैं घृणा से भरे हैं। क्रोध से भरे है कलह क्लेश से भरे,

वे भी मिलते हैं, लेकिन उनके शरीर मिलते हैं उनकी आत्मा और प्राण नहीं मिलते और उनके शरीर के ऊपरी मिलन से ही ऐसे बच्चे पैदा होते हैं शरीरवादी ये बच्चे क्रोध और घृणा लेकर जन्मते है। जन्म के साथ ही इनका पौधा विकृत हो जाता है फिर हम इन्हें समझाते हैं गीता, कुरान, बाइबल पढ़ो प्रार्थना करो। जो सब झूठी हो जाती है। क्योंकि प्रेम का बीज़ ही नहीं शुरू हो सका-प्रार्थना कैसे, शुरू होगी एक स्त्री पुरुष परिपूर्ण प्रेम और आनंद में मिलते हैं तो वह मिलन एक आध्यात्मिक हो जाता है। वह मिलन कामुक नहीं है। शारीरिक मिलन भी नहीं है वह किसी योगी की समाधि हो जाती है। वो मिलन पवित्र है वह कृत्य और परमात्मा उसी कृत्य से जीवन को जन्म देता है और जीवन को गति देता है। और परमात्मा ने जिसको जीवन की शुरुआत बनाया वह पाप नहीं हो सकता। जो चीज प्रेम से शून्य है। वह पाप हो जाता है। जब कोई स्त्री अपने पति को प्रेम करती है-वह पति को प्रेमी समझ कर अपने प्रेमी को प्रेम करती है और प्रेम के कारण उससे बंधती है, समाज के कारण नहीं, उनका विवाह उनका सहवास प्रेम से निकलता है, तो ही वो माँ बन पाती है सही अर्थों में-बच्चे पैदा कर लेने से कोई माँ नहीं बनती। माँ बनने का अर्थ बच्चे पैदा नहीं होता। माँ तभी बनती है स्त्री और पिता तभी कोई पुरुष बनता है जबकि उन्होंने एक दूसरे से प्यार किया हो जब पत्नी अपने पति को प्रेम करती है, अपने प्रेमी को, तो बच्चे उसे अपने पति का पुनर्जन्म मालूम पड़ते हैं वे-रि-बर्थ है उनके प्रेमी की वही शक्लें, वही रूप जो उसके पति में छिपा था। वह फिर प्रगट हुआ अगर उसने अपने पति को प्रेम किया है तो वह अपने बच्चे को भी प्रेम करती है वो प्रेम पति की प्रतिध्वनि है। वो बच्चा पति के रूप में प्रगट हुआ है। जब एक बाप अपनी पत्नी को इतना प्रेम करता है कि पत्नी में उसे परमात्मा दिखाई पड़ने लगती है। तब अपने बच्चों में फिर उसकी पत्नी का ही लौटाता हुआ रूप दीखता है। जब पत्नी को उसने पहली दफा देखा था, तब वह निर्दोष थी, तब जैसी शांत थी तब जैसी सुंदर थी उसकी झील सी आँखें इन बच्चों में लौट आई है। ये हमारे बच्चे उसी छवि को नया करके आ गये है। जैसे पिछले बसंत

में फूल खिले थे। पिछले बसंत में पत्ते आये थे पौधों में-फिर लौट आया बसंत। पुराने पत्ते गिर गये है। फिर नई कोंपलें निकल आई फिर लौट आया बसंत। फिर सब नया हो गया है। लेकिन जिसने पिछले बसंत को ही प्रेम नहीं किया था-वह इस बसंत को कैसे प्रेम कर सकेगा?

०००

लक्ष्य

गिरना बुरी बात नहीं है
गिरे रहना बुरी बात है
हारना बुरी बात नहीं है
हार को हार मान लेना बुरी बात है।

क्योंकि हार मानने वाला अपने अंदर से हार जाता है, टूट जाता। साहस बनाये रखें। बच्चा एक-एक कदम चलता है दूसरा आगे बढ़ाने की सोचता है। दूसरा पैर बढ़ाता है। बाहर की हार माइने नहीं रखती। हार अंदर की होती है। शिक्षक के लिए कोई प्रेरक जरूरी है- तो वह है आंखें? शिक्षा दीक्षा देने वाला एक है, शिक्षा लेने वाले अनेक हैं। कृष्ण का उपदेश क्या है कि आप अपने अंदर की शक्तियों को पहचानो जानो। खुशी इकट्ठा करना सीखें जितने ऊंचे पहाड़ है उतनी बड़ी परेशानियां है पर पहाड़ अड़िग है। हिम्मत रखना दृढ़ निश्चय से खड़े रहने का संकल्प लें, हिम्मत करो हौंसला बनाये रखो। कोई एक शब्द किसी को ऊपर उठा सकता है और कोई एक शब्द जिंदगी से गिरा देता है, तोड़ देता है, कोई भूलता नहीं। सिर्फ इंतजार करता है। सिर झुकाओ आगे बढ़ते जाओ अपने लक्ष्य की ओर। अपनी राह पर पहुँच के दिखाओ। दुनिया की कोशिश है तोड़ना वह तोड़ना चाहती है। लक्ष्य की प्राप्ति के लिए साधना करो। परिश्रम करो। तप करो पर लक्ष्य का ध्यान रख कर। अपने आपको जिस रूप में देखना चाहते हो उसका दिमाग में नक्शा बनाओ। अपने लिए जिंदगी की डायरी बनाओ। पहले भाग्य को अपने हाथ से लिखो। संवाद करना सीखें विवाद नहीं। अपने अंदर एक आग पैदा करें। उसे बढ़ायें। अपने गुस्से को संभालें किसी से अपना बदला लेंगे तो कैसे ? जो मंजिल पर

पहुँचना ही नहीं चाहते-वहां पहुँच जाओ-बदला नहीं लेना-पंजाब का एक हिस्सा पाकिस्तान में था वहां से चल कर एक लड़का जिसका नाम 'गंगाराम' था नौकरी ढूंढ़ने गया। एक आदमी ने कहा यहां मैं काम करता हूँ चल मेरे साथ मैं तेरी नौकरी लगवा दूँगा वो उसके साथ चल पड़ा। वो आदमी उसे अपने साथ लेकर दफ्तर पहुँचा वो उसे साहब के कमरे में ले गया। साहब अंदर नहीं थे और वो खुद कहीं इधर उधर हुआ कि गंगाराम बड़े साहब की कुर्सी पर बैठ गया। वो कुर्सी चीफ इंजीनियर की थी। जैसे ही बड़े साहब अंदर आये उसे अपनी कुर्सी पर बैठे देखा तो आग बबूला हो गये पूछा कौन हो तुम? उसने कहा मैं गंगाराम हूँ। नौकरी माँगने आया हूँ इंजीनियर साहब बोले, तुम्हारी औकात क्या है? यहाँ कैसे घुसे हो? तुम्हारी औकात क्या है? उसने गंगाराम को धक्का दिया और नीचे गिरा दिया। तुम इस कुर्सी के काबिल नहीं हो। गंगाराम को बहुत गुस्सा आया-मन में हुआ कि कहीं छलांग लगा कर मर जाऊँ। वो चुपके से वहां से निकल आया अनजान जगह थी कहां जाये?

भूखा प्यासा भटकता रहा-उन्हीं दिनों पेशवा बहुत दान करते थे एक दिन वो मंदिर के बाहर गरीबों को कंबल बाँट रहे थे। गंगाराम भी भिखारी की कतार में बैठा था। जब कोई एक आदमी कंबल उसको देने लगा तो उसने कंबल लेने से इन्कार कर दिया और उसके पांव में गिर पड़ा कि मैं पढ़ना चाहता हूँ। मुझे कंबल नहीं चाहिए पढ़ा दीजिए। मेरी शिक्षा पूरी करवा दीजिए। पेशवा उसे अपने घर ले गया।

गंगाराम ने पढ़ाई की और इंजीनियर बन गया। एक दिन उसको पुरस्कार मिला किसी सभा में उसको सम्मानित किया जा रहा था। और सम्मानित करने वाला भी वही इंजीनियर था। जिसने उसको अपनी कुर्सी से नीचे पटका था। लड़के ने उसे पहचान लिया और वो बोला सर मैं वही लड़का हूँ गंगाराम जो अनजाने में आपकी कुर्सी पर बैठ गया था-वो हैरान हो गया। आज उसी गंगाराम के नाम पर अस्पताल बने, गंगाराम नाम मार्ग और सड़कों पर अंकित

हुआ। यह दुनिया है, हाथ और ताली बजाने में लोग देर नहीं लगाते। अतः अपनी शक्ति को पहचानो। हर आदमी अपनी जगह पर काबिल है, ताकतवर है। अपने को कुछ न कुछ बन के दिखाओ। बहुत सुख दुख भोगना पड़ता है। बिना मूल्य चुकाये कोई चीज नहीं मिलती। उस आदमी ने भी टूटे हुये मन की अपनी हिम्मत संकल्प से अपना कार्य को पूर्ण किया और उस ऊंचाई तक पहुँच गया। दुख और चोट खाया हुआ व्यक्ति अपनी चोट को कभी नहीं भूलता। यह सृष्टि खुली किताब है मन सीखने की सोचे तो ऊंचाईयां दूर तक ले जाती हैं। पहला कदम बढ़ता है बाद में ऊंचाईयां आपको बढ़ायेगी। अंदर से मजबूती ही नहीं होगी तो ऊंचाइयों से दूर हो जाओगे। हिम्मत और साहस धैर्य रखना पड़ता है। कभी तलवार काम आती है, कभी सूई काम आती है। हर आदमी की अपनी कीमत है। अपनी शक्ति अपने सम्मान को पहचानना है। न दीन न हीन बनना न आधीन बनना केवल स्वाधीन। अपना आप खुद बनाओ। दुनिया को बताओ। अपने सम्मान की पगड़ी अपना सम्मान खुद संभालना है।

सिर सुरक्षित है तो पगड़ियां हजार हैं। अपने सम्मान को ऊँचा करने के लिए दुनिया की भीड़ में भेड़ नहीं बनना है। एक दिन की बात है कि सब लोग भाग रहे थे। उनमें कुछ अमीर लोग भी थे जिनके पास हीरे जवाहारात थे वो भी भाग रहे थे। लेकिन एक आदमी बड़ी मस्तानी चाल चल रहा था। लोगों ने कहा-अरे तुम क्यों अपनी अकड़ में मस्त चाल से चल रहे हो। यह अकड़ किस लिए। उसने कहा तुम अमीर लोग हो धन दौलत के मालिक हो-तुम तुम्हारी कीमती चीजें कोई छीन न लें-तुम बौने लोग हो मेरे लिए। मेरे पास मेरा आत्म विश्वास है। मेरी ऊंची सोच मेरा ज्ञान मेरे पास है। मेरी अकड़ ही मेरा आनन्द है। जीना सीखो तुम सुरक्षित हो तो सब कुछ आ जायेगा-डरपोक आदमी के पास डरपोक ही मिलेंगे। रोगी के पास रोगी और प्रेम करने वालों के पास प्रेम करने वाले बन जाओगे। अपने को ऊँचा उठाओ। ऊंची सोच बनाओ बड़ा महल नहीं बना सकते हो तो बड़ी सोच तो बना सकते हो

छोटी सोच और पांव की मोच कभी ऊपर उठने नहीं देती। इसलिए बड़ा व्यक्तित्व बनाओ। बड़ा व्यक्तित्व बनता है अच्छे चरित्र से आपकी मधुरवाणी से और बड़ा व्यक्तित्व बनाने के लिए धर्म ग्रंथों के गलियारों में जाना पड़ेगा। ऊंचे विचार ऊंची सोच के लिए घमण्डी लोगों से नहीं ऊँचे बड़े व्यक्तित्व वालों का सत्संग होना जरूरी है। 'दत्तात्रेय' महान संत थे। उन्होंने धरती से सीखा, बहते पानी को देखा जो खुद शीतल है और दूसरों को भी शीतलता देता है और और पानी कहता तृप्त शान्त रहो स्वयं को भी शीतल रखो और दूसरों को भी शीतलता दो। उन्होंने कहा, मैंने आकाश से सीखा मौन और शून्य रहना। पृथ्वी से धैर्य सीखा पानी से सीखा जो अग्नि को भी शान्त करता है। अग्नि से जल जाने पर पानी ही ठड़क देता है। गुरू के रूप में मैंने पानी को देखा-जो कभी अपने आकार में नहीं होता-मिल जाता है जैसे मिले वैसा बनो। मूर्ख से मिलो पर मूर्ख मत बनो। पानी को दोस्ती करनी आती है। हर रंग में रंग जाता है फिर भी अपना स्वभाव नहीं छोड़ता। लस्सी में दूध मिल कर उसको दुगुना कर देता है। दूध को गर्म करो तो उसमें से भाप बन कर चुपचाप निकल जाता है। पानी को निर्मल करता है। हां अगर वही पानी आग से दोस्ती कर लें तो जला भी डालता है इतनी आग नहीं जलाती जितना गर्म पानी जलाता है। अपना कद खुद बढ़ाओ। खाली सद्‌गुरुओं को श्रवण ही नहीं करना उनका श्रवण ज्ञान को अनुभव में भी लाना होता है। जीवन हमारा कीमती है। सुख दुख अपमान सम्मान हर पल कुछ न कुछ पाना है खोना है-जैसे पानी हाथ में हो तो अंगुलियों से धीरे-धीरे निकल जाता है। इसी तरह जिंदगी धीरे धीरे हाथों से पानी की तरह फिसलती जा रही है। खोने पर पाने की सोचो कि लेकिन पाना जरूर है। हिम्मवाला जो अंदर से मजबूत है जोखिम लेकर अपनी शक्ति को बढ़ाते हैं विकास की यात्रा करने वाले अपने आप को ऊंचा उठा कर चुम्बकीय शक्ति बन जाते हैं और वो किसी का सहारा नहीं ढूंढ़ते वो नायक या महानायक बन जाते है। भागवत में राजा 'परिक्षत' की कथा आती है 'परीक्षित' ने चार बार अश्वयज्ञ किये। यज्ञ की विधि विधान से पहले अपना 'अश्व' यानि अपना घोड़ा छोड़ा जाता था तो उस घोड़े को जो पकड़ता था

तो राजा युद्ध करके जीत कर 'अश्वमेघ' यज्ञ करता था लेकिन किसी भी राजा ने 'परीक्षित' के घोड़े को छुआ तक नहीं-लोगों ने कहा आपका व्यक्तित्व बहुत बड़ा है। हम आपके काबिल नहीं हैं कि आप का घोड़ा पकड़ें आपका व्यक्तित्व बहुत बड़ा है। व्यक्तित्व बनता है ऊंची सोच से मधुर वाणी से अपने व्यवहार से अपनी महानता से। सागर बहुत बड़ा है वो पहाड़ पर नहीं जा सकता है। कभी उसका मन करें पहाड़ों की ऊंचाइयों को छूने के लिए तो उसे बादलों का संग करना पड़ता है। वो वाष्प बन कर बादलों से दोस्ती करके पहाड़ों की ऊंचाइयों को छूने के लिए मीठा बन कर पहाड़ों पर बरसता है और सारी धरती नदी नालों को भर देता है। शक्तिशाली विचार अंदर भरोगे तो शक्तिशाली बनोगे। कमज़ोर विचार नीची सोच आपको नीचे गिरा देती है। जगह जगह लोग आपको रोकेंगे। जिंदगी की यात्रा रुक जायेगी। लक्ष्य से छूट जायेगें और सोचेगें कि मैं हार गया। बहुत पीछे रह गया। लेकिन भगवान् का हमेशा ध्यान रखो कि जिन हाथों से हिमालय सूर्य चाँद बड़े बड़े महान् हस्तियों को उसने बनाया है उन्हीं हाथों से भगवान् ने हमें भी बनाया है।

एक नोट (यानि) रुपया उसकी कीमत कम नहीं होगी क्योंकि उस नोट पर (सरकारी मोहर) Govt. ki Stamp लगी है है सो कीमती है, चाहे वो नोट तुड़ा मुड़ा ही क्यों न हो पर स्टैम्प तो लगी है न, तो सोचो मैं भी कितना कीमती हूँ अपनी कीमत को पहचानना है। हे भगवान् अगर मैं गिर भी जाऊँ या पीछे रह जाऊँ फिर से ऊपर उठाना है। पतंग थोड़ी देर के लिए ही सही पर आकाश की बुलंदियों को छूने की कोशिश में ऊपर उठती है पतंग को उड़ाने की भी विधि होती है नहीं तो पतंग आकाश की बुलंदियों को छू कर नीचे ही गिरती है। और विधि विधान से पतंग उड़ाने के लिए कोशिश की जाये तो वो दूर तक आकाश को नाप लेती है।

उसके लिए Coach होता है। गुरु होता है जो विधि सिखाता है। सफलता को इतनी इजाज़त मत दो कि आपकी जिंदगी जहन्नुम बन जाये पतन में मार्ग सहज हैं। उठो नहीं तो गिरने के साधन बहुत हैं अपने संकल्प उच्च कोटि

में रहे। रोज अनुष्ठान के साधन ठान लो मुझे उठना है, गिरना नहीं-उठ जाग और अपने आप को पहचान कि तू शेर का बच्चा है।

अनुकूलता प्रतिकूलता यह भी हमारे मन के अनुरूप है। इससे भी ऊपर है आनंद लोक। अगर आप अपने सुख दुख अपने ऊपर ले कर जायें तो वहां दिमाग में अमृतकुंड है। वहां पहुँच कर फिर प्रतिकूलता और अनुकूलता का कोई प्रभाव नहीं होता। आनन्द देने वाला परमात्मा है इसलिए कि आप परमात्मा से जुड़ गये। अमृत की प्राप्ति के बाद संसार के सुख अच्छे नहीं लगते। ''दत्तात्रेय'' ने कहा अमृत पाने के लिए अनुकूलता प्रतिकूलता सहन शीलता तक ले जायें। बरदाश्त करना। बरदाश्त के बिना रिश्ते नहीं चलते। जिन्होंने अपनी चेतना को नहीं जगाया। नौकरी कर ली, बच्चों को पाल लिया। लेकिन यह जीवन सफलता की और नहीं ले जाता। पशु पक्षी की तरह जीवन जीता है। अगर जीवन में आगे जाना चाहते हैं तो ''दत्तात्रेय'' ने जब अपनी साधना को उपर उठाया तो उनकी छाया से भी लोगों के दुख दूर हो जाते थे। उनका ''औरा'' इतना प्रभावशाली था। ''दत्तात्रेय'' घूमते-घूमते गीर जंगल में पहुँच गये। वहां शेर ही शेर थे ''गिरनार'' भी वहां पहुँच गये। उन्होंने देखा साधना में ''दत्तात्रेय'' आनंद ले रहे हैं। जैसे-जैसे वो अपनी साधना करते अजीब-सी आवाज करते तो बकरियां चराने वाले कहते यह आवाज कोई साधारण आवाज नहीं है। यह अटकाने वाली नहीं भटकाने वाली आवाज है। लोगों को पता चला तो वो उस जंगल में भी पहुँच गये अपने साथ गुड़, आटा लेकर आ गये रूट्ट टिक्कड़ बना कर जो धूनी दत्तात्रेय ने लगाई थी। वहां उस धूनी में टिक्कड़ डाल दिया और चुपचाप आंखें बंद करके बैठ गये। जब ''दत्तात्रेय'' ने आंखें खोली तो हैरान रह गये। और वो वहां से भी उठ कर आगे जंगल में चले गये। वहां उन्होंने गुरु को पुकारा। गुरु ने उत्तर दिया कहीं मत जा-तेरे भीतर ''नारायण'' उतर आये हैं। ऐसे ऐसे संत हुये हैं हमारे भारत में। द्रोणाचार्य धनुष पर पहले तीर चढ़ाना सिखाते थे। जब उन्होंने पूछा कि क्या दिखाई दिया। किसी ने कहा पेड़ पर रंग बिरंगे फूल चिड़िया दिखाई दे

रही हैं। उन्होंने कहा तीर मत चलाना। अर्जुन से पूछा तो उसने कहा मुझे चिड़िया की आंख दिख रही है। गुरु ने कहा तुम तीर चलाओ-आप अपने लक्ष्य को देखो-धनुष हाथ में लेकर खुद बाण बन कर चढ़ायें। धनुष को लक्ष्य बनायें और भगवान को अर्पित प्रत्यंचा पर तीर खींच कर लक्ष्य तक ले जायें- लोग भीड़ का हिस्सा बन जाते हैं भीड़ में जाओ पर भीड़ का हिस्सा मत बनो। वही लक्ष्य तक पहुँचता है। हमने दुनिया में बसना है फंसना नहीं। मधुमक्खी थोड़ा सा मधु लेती है। उसे पता है कि थोड़ा सा लूंगी तो ठीक है ज्यादा मजा लेने के लिए थोड़ा और पास जाना पड़ेगा तो-क्योंकि मेरे पंख शहद में फंस जायेंगे उड़ न पाऊँगी।

जीतने की समझ जब आ जाये तो आप मालिक बन जाते हो।

ooo

झुकने की कला

वो दूर से ही देख लें, यही बहुत है
मगर कबूल हमारा सलाम हो जाये

परमात्मा दूर से देख लें। क्योंकि उसकी नजर अगर पड़ गई तो सेतू पुल बन गया। फिर दूरी कहाँ ? उसकी नज़र से जुड़ गये कि सेतू बन जायेगा। नाचो गुनगुनाओ, पिघलो। आंसुओं में अमृत है जो विरह में डूबेगा वही मिलन है। विरह की कीमत चुकानी पड़ती है। उससे प्रेम उमड़ता है। जैसे पानी सींचते हैं वृक्ष पर तो वृक्ष में नये पल्लव आते हैं, नये फल लगते हैं। ऐसे में जो पौधा है उसको भी पानी की जरूरत है। अगर पानी न मिले तो सूख जाता है। नमस्कार संकीर्तन इत्यादि हमारा पोषण हैं। हम बार-बार झुकते हैं परमात्मा की ओर झुकते ही चले जाते हैं। झुकना हमारे जीवन की कला हो जाती है। झुकना ही हमारा स्वभाव हो जाता है वो कुछ चीजें हमारे भीतर उगेंगी जो उन्हीं में उगती हैं जो झुकना जानते हैं। नमस्कार का अर्थ है झुको। झुकने का मौका न गंवाओ। एक अकेला देश है हमारा भारत सारी दुनियां में, यहां नमस्कार का उपयोग करते हैं कि हम झुक गये तुम्हारे आगे।

प्रार्थना, उपासना स्तुति बोल कर
भाव विभोर हो कर
झुका ए हजरते तालब
अजीब है वो यही है,
यही है
नाम कीर्तन नमस्कार आदि उसका पोषण है।

रास्ते में चलते, कोई मिल गया तो तुमने कह दिया राम-राम जी बेशक तुम अजनबी हो लेकिन तुम्हारे भीतर राम है। तुम राम ही हो तुम्हें देखकर राम की याद आ गई। मैं यह मौका क्यूं छोड़ू। मैं सोचती हूँ कैसे अद्भुत लोग थे वो जिन्होंने इसे उपचार बना लिया और यह बात खोजी कि तुम्हें देखकर मैं राम के लिए झुक गया हूँ। वैसे नमस्कार की कई विधियां है गुडमार्निंग, शुभ-प्रभात आदि। लेकिन इसका कोई खास प्रभाव नहीं है महत्व नहीं है। जब हमारे मुँह से 'जय राम जी' निकलता है तो लगता राम जी मेरे सामने आ गये है। यानि तुम में मैंने भगवान् को देखा है इसलिए मैं यह मौका क्यूँ छोड़ू। कई बार ऐसे लोग मिल जाते हैं जिन्हें वो हमें या हम उन्हें नमस्कार करना नहीं चाहते बल्कि उम्मीद लगाते हैं कि वो ही नमस्कार करें क्यूं कि मेरा पद उपाधि ऊंची है उससे। अकड़ने का मौका नहीं छोड़ते अकड़े रहते हैं कि मैं क्यूं झुकूं। लेकिन असल में झुकने का अर्थ है, अपनी अकड़ को गलाओ। जितना बन सके झुको तुम्हारे यजन भजन से प्रेम उमंगें हमारे अंदर प्रेम का पौधा बड़ा होगा। उस दिन सुगंध सुवास फैलेगी। उसी दिन प्रार्थना में सुगंध उठेगी। परमात्मा चले आयेगा, फूल खिलता है तो वो भंवरों को बुलाता नहीं है वो खुद ही चले आते हैं। हमेशा ध्यान रहे। सदा कोमल जीत जायेगा कठोर पर। पानी जीत जाता है चट्टानों पर। सीधे अकड़े हुये पेड़ ही काटे जाते हैं। टेड़े मेढ़े पेड़ों को कोई नहीं काटता। टेड़े मेढ़े पेड़ धरती पर झुके हुये गिरे उन पड़े पौधों को जरा सी मिट्टी का साथ मिलता है तो वही पर उनकी शाखायें निकल पड़ती हैं नहीं तो सूखा हुआ गिरा हुआ अकड़ा हुआ पेड़ को कोई भी उठा के फैंक देता है। प्रेम में अहंकार गलता है। वो फैल जाता है फिर उस परम प्रेम में परमात्मा के सामने पूरी तरह झुकना होता है। उसी झुकने की कला का नाम परमात्मा को पाना होता है। मस्जिद में भी वही है वहां अमूर्त है मंदिर में भी वही बैठा है वहां मूर्ति में विराजमान है। मंदिरों में माथा रगड़ते हैं कि भाग्य बन जाये। मौलवी लोग माथा रगड़ते है रगड़ रगड़ कर माथे पर निशान बना लेते हैं। मगर इतना माथा रगड़ो कि माथे पै नहीं दिल में निशान बन जायें। यह समझ लेना जरूरी है कि हर आदमी

के पास अपनी शक्ति है। अपनी हिम्मत कभी भी कमजोर नहीं पड़नी चाहिए। सब कुछ हो सकता है।

शमां बुझ जाये तो जल सकती है
किश्ती तूफान में जूझ सकती है
किस्मत किसी भी पल बदल सकती है

नीचे गिरे हुये ऊपर उठ सकते हैं किसी की भी अकड़ देर तक नहीं चलती टिकती। सो जिंदगी को ग्रहण मत लगने दो ऐसे समय में उस परमात्मा के आगे झुक जाना है। सिद्धांतों में जीना आ जाये संग्रहित करने वाले बन जायें। झुकने की कला जीवन में आ जाये बार-बार झुकते हैं परमात्मा की ओर झुकते चले जाते हैं। झुकना ही हमारे जीवन की कला हो जाती है। हमारा अच्छा स्वभाव बन जाता। कुछ चीजें हमारे भीतर उगती हैं कब उगती हैं पता ही नहीं चलता। अकड़ के साथ हमारे जीवन में पड़े कंकर पत्थर हट जाते हैं। जैसे बीज़ पत्थरों में दबे पड़े थे। ऐसे ही हमारी अकड़ और अहंकार ने हमारे भीतर के झरने को रोक रखा है चट्टान की तरह।

नमस्कार करना झुकना इससे अनुराग पैदा होता है और पत्थरों के नीचे दबे अंकुर फूट जाते हैं। गांव में पुराने लोग आज भी सुबह सुबह किसी को मिलते हैं तो राम-राम जी का स्मरण करते है। दोपहर को भी थोड़ा सा समय निकाल लेते हैं। इस तरह सब ओर से थके मांदे प्रभु को याद कर लेते है। लेकिन अब, उठते ही हाय-वाय करके अखबार ढूंढ़ते हैं। जैसे रात भर प्रतीक्षा करते रहे होंगे। हालांकि हम जानते हैं कि अखबार में नया क्या होगा। रात भर जो T.V. पर तपसरे सुनते हैं वही-सब होगा पर बेचैनी कितनी होती है। ऐसी बेचैनी भगवान् के लिए कभी नहीं होती। हालांकि मालूम है अखबार में कुछ भी नया नहीं होगा वही पुराना है सब कुछ। पिटी पिटाई दुनिया चलती है। लकीर की फकीर। वही मुकद्दमें चोरी चकारी राजनीतिज्ञ, वही मुखोटे वही आश्वासन लेकिन फिर भी सुबह की चाय के साथ अखबार चाहिए। हमारा

शरीर हमारी आत्मा अखबार हो गई है। अखबार से हमें जानकारी मिलती है। लेकिन उसके साथ अपने पूर्वजों की विरासत धार्मिक ग्रंथ भी पढ़ें। ग्रंथों से आपके भीतर ग्रंथियां खुलती है अखबार से Information (सूचनाएं) मिलती हैं पर भागवत से भगवता प्रगट होती है। जिसमें हमारे स्वभाव दिखेंगे उसमें से ही हम उठेंगे। हमारे अंदर के फूल खिलेंगे। हमारा स्वभाव बनेगा झुकने का कि हम अकड़े हुये नहीं हैं लघु हैं। रामायण में एक शब्द आता है। रघुराई, हनुमान चालीसा में भी एक शब्द लघु आता है। राम अपने गुरु के पास जाते हैं तो शब्द रघुराई आता है यानि अपने बड़ों के पास जाये तो राई बन कर जायें। सबसे छोटा बीज होता है राई का दाना। बड़ों के आशीर्वाद आपके बजुर्ग आपके गुरु हैं जो राई से पहाड़ बना देते हैं। और तन कर पहाड़ बन कर गुरु के पास या बड़ों के पास अकड़ घमंड से जायेंगे तो राई बन जाओगे। जैसे अपने माता-पिता के पास जायें तो बच्चा बन कर जायें न कि सूबेदार थानेदार बन कर जायें। वो आपका छाता है, ठंड़ी छाया है। उनके पास बैठें। कुछ दे सकते हो तो दें नहीं तो उनको एक अहसास दें कि वह आपके करीब हैं ताकि खुले मन से अपनी बात कह सकें। उनकी किसी भी बात का बुरा न माने। उनके जीवन से उनकी वाणी से ई (यानि) ईख (मिठास) जा चुकी है खटास ही रह गई है। उनकी वाणी से सिर्फ बाण ही बाण रह गये हैं। वह कांटों की चुभन महसूस करते हैं। सो उन्हें रूलाओ नहीं। आपके बड़े बुजुर्ग आपके लिए छतरी हैं जितनी देर आपके सिर पर रहेगी। हर बुरी बला से दूर रहेंगे। उनके सामने अकड़ो मत तभी आपके पितरों की बरकत होगी आप के घर में उनका श्राद्ध करते हो, जो जीते हैं उनका ही एक दिन मनाओ (मदर डे) पश्चिम की भाषा है कि हमारे यहां माता-पिता का दर्जा भगवान् से दिया जाता है। माता-पिता तुम मेरे। कभी भगवान् को किसी ने ताया, चाचा, मामा से नहीं सम्बोधित किया गया। बाप हमेशा बेटे की पाकेट (जेब) को देखता है पर माँ बेटे का पेट देखती है। पूछेगी कुछ खाया कि नहीं चाचा, मामा, ताया कुछ करेंगे तो हिसाब किताब से और फिर बड़े हो कर उनका लेखा जोखा समझाते हैं, सुनाते हैं। लेकिन बाप देता है तो बेहिसाब। वो

हिसाब नहीं रखता। इसीलिए सबसे ऊपर माँ बाप का दर्जा होता है। बाप सूर्य की तरह तपाता है। उसे मालूम है कि आगे आने वाला संघर्ष भरा जीवन है, तो माँ कोमल चाँद की तरह शीतलता प्रदान करती है। माँ का दर्जा हर मज़हब में बड़ा माना गया है मुसलमानों में 3 हक माँ को मिलते हैं और चौथा हक बाप को मिलता है। माँ जब तक दूध न बख्शे जहन्नुम भी नसीब नहीं होता। सो माँ परमेश्वर है। पहला घर माँ की कोख होती है यहाँ बच्चा सुरक्षित महसूस करता है, 9 महीने से लेकर 9 वर्ष तक माँ गुरु होती है। 9 से 18 साल तक बाप गुरु है। और माँ में सभी देवताओं की शक्ति उपलब्ध होती है। इसलिए कोई एक दिन रख लो। जब आप माँ बाप का दिन मनाऐं। उन्हें अपने हाथों से खिलायें। मंदिर को चाहे समय दो या नहीं पर अपने माँ-बाप को समय दें। उनकी मुट्ठी में कुछ अनगिनें रुपये पैसे अवश्य दें बौद्धिक संस्कृति में जो माँ का स्थान है वही परमेश्वर धाम है। जरा करके देखें, कितना सकून मिलता है। उनके हृदय से निकले आशीर्वाद एक अनहोनी चमत्कार का काम करेगी-जैसे किसी मुजरिम को फांसी की सजा हो जाये पर राष्ट्रपति की चिट्ठी आ जाये तो फांसी माफ कर दी जाती है। यह छोटी छोटी आसमानी बूंदे हैं उनके आशीर्वाद इन्हीं बूंदों से धरती हरी भरी रहती है। झील तालाब भी इन्हीं बूंदों से भर जाते हैं।

ooo

कुनकुने लोग

मनुष्य जाति एक लम्बे समय से जिस अभिशाप के नीचे जी रही है उस अभिशाप ने हृदय के तारों को बिल्कुल ढीला कर दिया है और वह अभिशाप यह है कि हमने हृदय के सारे गुणों की निंदा की है। हृदय की जो क्षमताऐं हैं उनको हमने अभिशाप समझा, वरदान नहीं और यह भूल बड़ी घातक सिद्ध हुई। हमने क्रोध की निंदा की अभिमान की निंदा की। और क्षमा की प्रशंसा की। घृणा और प्रेम दोनों के पीछे प्रगट होने वाली शक्ति भिन्न नहीं है। यह नहीं सोचा कि अभिमान में जो ऊर्जा प्रगट होती है, वही विनम्रता बन जाती है। जैसे किसी साज को बजाने से पहले उसके तार ठीक करने पड़ते हैं। उसी साज से संगीत प्रगट होता है और उसी से बेसुरापन। लेकिन बेसुरापन में साज का कोई कसूर नहीं। साज ठीक न हो अव्यवस्थित था जिन तारों से बेसुरापन पैदा होता था, उन्हीं से मुग्घ करने वाला संगीत भी पैदा हो सकता है। सुर और बेसुर एक ही तार से पैदा होने वाली चीजें हैं। दोनों में से एक आनंद की तरफ ले जाती है और एक दुख की तरफ ले जाती है। लेकिन दोनों के बीच एक ही तार है, और एक ही सितार है। वीणा अव्यवस्थित हो अराजक हो बेसुरापन पैदा होता है। इसी तरह मनुष्य का हृदय सुव्यवस्थित संतुलित नहीं है तो क्रोध पैदा होता है, वही हृदय यदि संतुलित हो जाये तो जो शक्तियां क्रोध में प्रगट होती हैं। वही क्षमा में भी प्रगट होनी शुरू हो जाती हैं। क्षमा क्रोध का ही रूपान्तरण है। अगर हम क्रोध के विरोध में है।

और क्रोध को नष्ट करने का उपाय कर रहे हैं तो जीवन रूपी सितार को नष्ट करने का उपाय कर रहे हैं, और एक ऐसा मनुष्य पैदा होगा जो

अत्यन्त-अन्त दीन हीन अधीन होगा। जिसके मन में कोई शक्ति विकसित नहीं हो पायेगी-जैसे हम फूलों की क्यारियों में साग सब्जी उगाने के लिए खाद मंगवा कर ढेर लगा लेते हैं और उस खाद की दुर्गंध को बरदाश्त नहीं कर पाते, नाक मुंह बंद करके निकलते हैं उसके पास से। और जब वही खाद हम फूलों की क्यारियों में साग सब्जियों में डाल देते हैं तो उसी दुर्गंध भरी खाद का रूपान्तर होता है तो हरी भरी सब्जियों में, फूलों में परिवर्तित होती हैं, तो वही दुर्गंध सुगंध में बदल जाती है। इसी माया का नाम है "योग" इसी का नाम है 'धर्म'। जीवन में जो भी व्यर्थ है, उसको सार्थक दिशा में परिवर्तित करने की कला है। लेकिन किसी गहरे अभिशाप की छाया ने हमको पकड़ा हुआ है। इसलिए हमारा हृदय अविकसित रह गया है। इसमें हमारे तथाकथित धर्म गुरुओं ने भी शोषण किया है 'भय' का शोषण 'भय' के नाम पर नरक स्वर्ग का लोभ दिया कि काम क्रोध लोभ मोह माया सब नरक के द्वार हैं इनसे बचो। इनको जीतोगे तो स्वर्ग मिलेगा। विपरीत जाओंगे तो दंड पाओगे। लेकिन मेरा मानना है कि न कहीं कोई स्वर्ग है न नरक। नरक स्वर्ग चित्त की अवस्थायें हैं। हमने प्रेम किया या प्रेम से कुछ दिया तो हम स्वर्ग में है। घृणा की है तो नरक में पड़े होंगे। पर हम किस नरक की बात कर रहे हैं। यहां आग जलती है? क्रोध में भी तो हम जल ही रहे होते हैं। जब हम कोई अच्छा कर्म करते हैं या प्रेम से किसी को कुछ दे देते हैं किसी के सहयोगी उपयोगी बनते हैं। तब हम स्वर्ग में होते हैं यहां गंध सुवास शीतल हवा बहती है। इस कल्पना के भीतर बड़ा आनंद आता है। और यही आनंद ऊंचाईयों की ओर ले जाता है। और फिर इक दिन परमात्मा का अनुभव शुरू होता है-अब रहा सवाल काम क्रोध मोह का है यह महात्माओं ने बंधन बताये हैं-यह गलत धारणायें सदियों-सदियों से दोहराये जा रहे हैं कि प्रेम संसारिक बात है। भक्ति असांसारिक बात है। अध्यात्मिक बात है-इसलिए पहले काम क्रोध, मोह, माया को छोड़ो। लेकिन मेरे ख्याल से संसार ज़ड़ है और फूल की तरह है-जड़ संसार है और अध्यात्म फूल हैं। यह दोनों अलग-अलग दीखते हैं लेकिन भीतर से जुड़े हुये हैं प्रेम जड़ है और प्रार्थना फूल है। जैसे

काम को जड़ और राम को फल से जोड़ों दोनों के अंदर रस है रसधार है। अगर जड़ काट देंगे तो फूल मुरझा जायेंगे। मेरी दृष्टि से काम, क्रोध, मोह लोभ सब जड़ें हैं हमारी। और यह सारे तत्त्व हमारे भीतर जुड़े हुये हैं। इनका विकास होना चाहिए और, चरम विकास हो तो इस चरम बिंदू पर रूपान्तरण हो सकता है। सारे परिवर्तन चरम बिंदूओं पर ही होते हैं। नीचे कोई परिवर्तन नहीं होता। हम पानी गरम करते हैं तो वो कुनकुना होकर भाप नहीं बनता। लेकिन कुनकुना पानी जब सौ डिग्री पर अपनी चरम गरमी को उपलब्ध होता है तो एक क्रान्ति होती है। पानी जब सौ डिग्री पर गर्म होता है तभी भाप बनती है। उससे पहले भाप नहीं बनता। हम सब कुनकुने आदमी हैं। हमारी जिंदगी में कोई परिवर्तन नहीं हो सकता। जब तक हमारे चित्त हमारे हृदय की भावना सारी शक्तियां विकसित नहीं होती तब तक क्रान्ति नहीं हो सकती क्योंकि हम हृदय की भावनाओं का दमन करते हैं। उतना ही हमारा हृदय अचेतन होता चला जाता है-अब रहा सवाल क्रोध का जिसे हम कहते हैं कि क्रोध पाप मूल अभिमान कहते हैं-यानि क्रोध को पाप कहा गया है। मेरे ख्याल से क्रोध की तेजस्विता उपलब्ध हो तो उसका रूपान्तर क्षमा हो सकता है। परशुराम दुर्वासा ऋषि जरूर थे ज्ञान के ज्ञाता ऋषि थे शास्त्रों का पुराणों का ज्ञान था लेकिन अपने क्रोध को श्राप देने में ही लगा दिया पर राम के संग जब परशुराम जी मिले तो राम ने धनुष तोड़ कर उन्हें अपने साथ जोड़ लिया वो क्षमा वाले बन गये। वाल्मीकी ऋषि पहले कैसे हुआ करते थे-पर मरा मरा बोलते-बोलते राम के भक्त बनकर राम राम जपने लगे जिन्होंने पहला श्लोक लिखा-रामायण लिखी-(वाल्मीकी रामायण)। दुनिया के बड़े-बड़े ब्रह्मचारी हुये-अगर आप उनका जीवन पढ़ेंगे तो पायेंगे कि अपने प्राथमिक जीवन में उनसे ज्यादा कामुक उनसे ज्यादा कामवान और कोई नहीं था। गांधी जी के जीवन में इतना ब्रह्मचर्य फलित हुआ। यह गांधी जी के प्राथमिक जीवन की अत्यन्त कामुकता का ही फल था। गांधी जी अत्यन्त कामुक थे। जिस रात गांधी के पिता की मृत्यु हुई, पत्नी ने कहा कि पिता आज रात बच नहीं सकेंगे-उस रात भी गांधी अपनी पत्नी से दूर नहीं रह सके। वह अंतिम रात

थी, बाप के मरने की रात थी। उस रात पिता के पास बैठना जरूरी था, क्योंकि अंतिम विदा थी। उसके बाद पिता से मिलना नहीं हो सकेगा, लेकिन आधी रात गये गांधी अपनी पत्नी के पास पहुँच गये। जब पिता मरे वो तब गांधी पत्नी के पास बिस्तर पर ही थे। इसकी बहुत बड़ी चोट गांधी जी के चित्त पर पहुँची। बाद में गांधी जा का सारा ब्रह्मचार्य इसी चोट से विकसित हुआ। वह जो अत्यन्त कामुक चित्त था, उसकी सारी ऊर्जा और सारी शक्ति ब्रह्मचर्य की तरफ फलित हुई। यह कैसे हो सका? इसलिए कि शक्तियां हमेशा तटस्थ होती हैं, सिर्फ दिशाओं का परिवर्तन होता है। जो शक्ति काम की तरफ बह रही थी, वह सारी शक्ति विपरीत दिशा की ओर बहने लग पड़ी। शक्ति थी तो बहने लग पड़ी। शक्ति ना होती तो क्या खाक बहेगी। शक्ति ही तो दूसरी दिशा में भी जा सकती है। सारी शक्तियां ठीक से विकसित होनी चाहिए। पंडित पुरोहितों ने शास्त्र को अनुभव किये मनुष्य को भ्रम में डाल दिया और उस भ्रम से मानव को अत्यन्त दीन हीन वीर्यहीन बना दिया। पुराने लोग हमसे ज्यादा गहरे अर्थों में जीवन का अनुभव करते थे। यदि मनुष्य का ठीक ठाक विकास हो तो उसके जीवन में क्रोध का अपना अनिवार्य स्थान है क्रोध की भी अपनी एक जगह है, उसका अपना एक रंग है। अगर क्रोध को हम अलग कर दें क्षमा कभी नहीं आयेगी हमारे मन में अभिमान की निंदा करते हैं हम, और विनम्रता की प्रशंसा करते है-बिना सोचे समझे हुए कि अभिमान में जो स्वाभिमान में बदल सकता है। एक विशिष्ट डिग्री तक हमारे हृदय में शक्तियों को विकसित होना चाहिए तभी उनमें क्रांति हो सकती है और उन में परिवर्तन हो सकेगा। अन्यथा नहीं हो सकता। लेकिन हम तो क्रोध के शत्रु हैं लोभ के शत्रु हैं, हम रोग के भी शत्रु हैं हम सब कुनकुने आदमी हैं रहते हैं, और कुनकुनी जिंदगी जो रहती है-उसमें कभी क्रांति नहीं घट सकती। और इस कुनकुनेपन का मनुष्य पर घातक असर हुआ है इसलिए हमारे हृदय के सारे गुण विकसित होने चाहिए और ठीक विकसित क्रोध भी अपना सौंदर्य रखता है जो हमें दिखाई नहीं पड़ता। क्रोध का भी अपना तेज है अपनी ऊर्जा है। अगर आपको क्रोध आ जाये तो उसको दबाने की कोशिश मत करें बल्कि

एकान्त कमरे में बैठ कर क्रोध पर ध्यान दीजिए क्रोध को पूरा देखिए समझिये कि क्यूं, कहां से पैदा हुआ है, तभी हम क्रोध पर हावी हो सकेंगे-जब तक अंदर के सारे तत्व जुड़ कर खड़े नहीं होते। और सारे गुणों का विकास हो चरम सीमा तक पहुँच जाये तभी रूपान्तर हो सकता है। नीचे से कोई परिवर्तन नहीं होता। हमारे अंदर कई शक्तियों के समूह है अनजान शक्तियों के केंद्र है जिनसे हमारा कोई परिचय नहीं है न था। जब पहले आकाश में बिजली चमका करती थी तब आदमी डरता था हाथ जोड़ कर बैठ जाता था घबराता था इंद्र देवता को याद करता तब बिजली हमारे लिए एक डर थी-लेकिन आज हम जानते हैं, बिजली हमनें बांध ली। आज बिजली भय का कारण नहीं है वह हमारी सेविका बन गई। आज घर-घर में प्रकाश है बीमार का इलाज होता है। मशीनें चलती हैं। आदमी की सारी जिंदगी आज उससे प्रभावित है। लेकिन हजारों सालों से आदमी सिर्फ डरता था। एक बार जान लिया तो मालिक बन गया। ज्ञान मालिक बना देता है। हमारे अंदर भी बिजली से बड़ी ताकतें मौजूद हैं। क्रोध चमकता है, घृणा चमकती है प्रेम चमकता है। हम घबरा जाते हैं, डर जाते हैं, क्योंकि हम इन शक्तियों को जानते तक नहीं कि यह क्या है? हमें चाहिए अपनी जिंदगी को प्रयोगशाला बनाए और भीतर उन सारी ताकतों को जानने निरक्षण करने और पहचानने का प्रयास करें। भूल कर भी दफन न करें। क्रोध आ जाये तो सौभाग्य समझिए और जो आदमी आप में क्रोध ला दे उसका धन्यवाद कीजिए, कि उसने आपको मौका दिया है। आप के भीतर एक ताकत जग गई। एकांत में बैठ कर उसे पहचानिए। आदमी के अंदर बहुत कुछ दबा पड़ा है। अभी तो आदमी ने उसे ढूंढ़ने की शुरुआत भी नहीं की। हो सकता है मनुष्य की एक और नयी जाति होगी और हम उससे कितने फासले पर होंगे। क्योंकि मनुष्य के मस्तिष्क को दो हिस्सों में बांटा है। दायां बायें को चलाता है। एक हिस्सा नर्म दूसरा कठोर-भगवान ने हर चीज को दो हिस्सों में बांटा गया है। चांद ठंडा, सूरज गर्म शरद ठंडी और ग्रीष्म ऋतु गर्म, दिमाग जो दायां बायें को चलाता है वो औरतों में नर्म उनमें ममता होती है और पुरुष कठोर। दायां मस्तिष्क बायें को यानि औरतों के दिमाग को

चलाता है वह नर्म है और फैसला नहीं कर सकती यह कार्य करूँ या नहीं, क्या पहनूं क्या न पहनूं decide ही नहीं कर सकती असमंजस में रहती हैं भावुक सी। और पुरुष सख्त स्वभाव वाला। इसीलिए औरतों की बाजू में कलावा बायें हाथ में बांधा जाता है। पुरुष के दायें हाथ में। कुछ औरतें, मर्द जिनके दोनों मस्तिष्क काम करते हैं वही Balance persontily वाले होते हैं। वैज्ञानिक तो कहते हैं मनुष्य के दिमाग का बहुत सा हिस्सा बंद पड़ा है। अगर आदमी का अनुभव अपनी सोई हुई शक्तियों को पहचाने, अपना ज्ञान विकसित करे तो जो हिस्सा बंद पड़ा है सक्रिय हो जायेगा तो अपनी प्रयोगशाला में नये-नये अविष्कार करके सशक्त मानव पैदा कर सकता है। जीवन में जो व्यर्थ है उसको सार्थक दिशा में परिवर्तित करने की कला आ सकती है-काम, क्रोध, मोह, माया इस दुर्गंध भरी खाद को सुगंध में बदल कर अपनी छोटी सी नर्सरी में सुगंध भरे पौधे लगा कर Transplant करके हम समाज के दूसरे लोगों में परिवर्तित करें इसी माया का नाम है योग उसी का नाम है धर्म।

ooo

गुरु–ऋषि, वैज्ञानिक

एक आह जो दिल को रूला गयी
एक वाह जो दिल को बहला गयी
एक राह जो मंजिल तक ले गयी
एक शाह जो शहनशाह जो गुरु से मिला गया

दुनिया के किसी कोने में चले जाओ 5 तरह के लोग मिलते हैं। एक वो जो मित्र दोस्त बनायेगा। एक तुम्हारा दुश्मन। एक तुम्हारी छाया ढूंढ़ेगा। एक उदासियों में रहने वाला। जब 5 तरह के लोग मिलेंगे तो संसार बन गया कोई सहारा बनेगा। किसी का सहारा तुम बनोगे। एक राजा ने अपने बेटे को बड़ी कोमलता से पाला बाग में जाये तो नौकर कालीन बिछा देते थे। साधु जी आये जब उन्होंने देखा तो, राजा ने कहा, उस बच्चे को मजबूत बनाओ राजा ने कहा इसके पांव बड़े कमजोर कोमल है, कांटे लग जायेंगे। साधु ने कहा जूते पहना दो और इसे छोड़ दो। इसे मजबूत बनाओ। अंदर की शक्तियों को मजबूत बनाओ। दुनिया तो आपके पांव उखाड़ेगी पर आप अंगद की तरह पैर जमा लो। अर्थात् अपना मनोबल अर्थबल से भी बड़ा बल है। आत्मविश्वास Sucessful (सफलता) की चाबी आप के पास है। इसके लिए गुरुओं को प्रणाम करो। जिसकी कृपा से हृदय की आंखें खुलती हैं। मन की आंखें भी हैं पर हृदय के ज्ञान चक्षु होते हैं जिससे सच का बोध वास्तविकताओं को जान सके। स्वयं के बारे में जानो खोदो अपने आपको-अपनी, दुर्बलताओं को कितना माफ कर सकते हैं। हम किस तरह के प्राणी हैं किस तरह का जीवन जीना चाहते हैं। यह वो शाह है जो शहनशाह परमात्मा की ओर ले जाता है। गुरु का अर्थ है, उपाय। गुरु कोई व्यक्ति नहीं होता। गुरु तत्व है वह प्रगट

करता है। जब श्रद्धा जागती है तो गुरुत्व जागता है। कठिनाइयों से मुक्ति दिलाता है। भीतर का अंधकार दूर करता है। कानों में मंत्र फूंकता है। ताकि कानों के द्वारा में कुछ सुनाई दे। एक विस्फोट की कल्पना करता है। कानों के द्वारा कुछ सुनाई देने के बाद कैमीकल यानि रसायन बने। रसायन मिल जाये हमारे यहां गलती करने पर कान खींचे जाते हैं। कान Gun Point है उसको Press किया जाता है। कान के द्वारा कुछ भीतर डाल दें ताकि रसायन बन जाये। सुन सुन कर रसायन बना देता है। "श्रवण प्रकिया" सुनना बड़ी चीज है। हमारे यहां महीने का नाम है "श्रवण मास" यानि इस महीने सुनना केवल सुनना। गणेश जी के कान बड़े बड़े है। मुँह पर सूंड़ यानि कि सुनो, केवल सुनो बोलो कम। हमारे यहां पूर्व में डाक्टर कम और सद्गुरु को ज्यादा महत्व दिया जाता है। अब पश्चिम में मनोवैज्ञानिक को गुरु कहना शुरू कर दिया है। पूरब ने कभी गुरु को मनोवैज्ञानिक नहीं कहा, क्योंकि पूरब को मनोवैज्ञानिक को जन्म देने की जरूरत नहीं पड़ी। यहां गुरु है वहां मनोवैज्ञानिक की खास जरूरत नहीं पड़ी। क्योंकि वो सस्ता परिपूरक है। खुद उलझनों में उलझा जिन उलझनों से वह मरीज को मुक्त कराने की कोशिश कर रहा है। सद्गुरू उन उलझनों के पार ले जाता सद्गुरू को खोजना पड़ता है। मनोविज्ञानक को खरीदना पड़ता है। (Dr.) मनोविज्ञानिक धन से मिलता है। सद्गुरू मन से मिलता है। जब एक शिष्य और गुरू का मेल होता है तो वो इतिहास बदल देता है। गुरु कान में मंत्र फूंकने का काम ही नहीं करता-जान फूंकने का काम भी करता है।

कहीं से एक चिंगारी डाल दो दोस्तो
इस दीये में ज्योति भी है तेल भी है
कोई चिंगारी डालने का काम कर दे
वो काम गुरु करता है

सद्गुरु परमात्मा से मिलाता है। सद्गुरु कुछ है तो शाश्वत कवि है। वह तुकबंदी नहीं करता। न छन्दों में बंध सकता। वो शब्दों और व्याकरण को

भी नहीं जानता फिर भी वो शाश्वत कवि है। इसलिए हमारे पूर्वजों ने सद्गुरुओं को ऋषि कहा है। ऋषि का अर्थ है 'कवि' क्योंकि गुरुओं ने जो कुछ कहा खुद नहीं कहा-उनके अंदर परमात्मा ने कुछ कहा इसलिए हमने वेदों को अपौरुषेय कहा। क्योंकि पुरुष द्वारा निर्मित नहीं इसलिए कहते हैं कुरान मुहम्मद ने नहीं रची उनके अंदर उतरी। जीसस कहते हैं कि मैं नहीं बोलता मेरे अंदर प्रभु बोलता है। गुरु केवल शाश्वत की बांसुरी है। आप उसके प्रेम में पड़ जाओ तर्क छोड़ दो तब परमात्मा बोलता है। जब तक सद्गुरु की गंध आपके मन में न बस जाये तब तक कुछ नहीं होगा। सद्गुरु और शिष्य का सबंध जैसे प्रेमी और प्रेयसी का हा मनोवैज्ञानिक एक तकनीशिन है उसके प्रति समर्पण का कोई प्रश्न नहीं। क्योंकि हम उसका दाम चुका देते हैं। धन्यवाद देने की भी जरूरत नहीं। लेकिन सद्गुरु के आंगन में आकाश उतरता है वहां प्रभु विराजमान होते हैं। मनोविज्ञानी के पास हम तब जाते हैं जब हम क्लेश पीड़ा में होते हैं। वो हमें मरहम लगाता है। दवाई देता है। पर वो हमारा गुरु नहीं। गुरु के पास हम तब जाते हैं जब हम भली भांति स्वस्थ हो। गुरू से हमारा हार्दिक नाता है। उसका ऋण चुकाया नहीं जाता। जब तक कि हम उस अवस्था में न आ जाएं यहां हमारे भीतर छिपा तत्व प्रगट हो जाये तब तक गुरु का ऋण नहीं चुकेगा। सद्गुरु को खोजना पड़ता है, मनोविज्ञानी को खरीदना पड़ता है। डाक्टर तो धन से मिलता है सद्गुरु मन को चढ़ाने से मिलता है। शिक्षा दीक्षा देने वाला एक है, शिक्षा लेने वाले अनेक हैं। गुरु माध्यम से देवता शक्ति प्रदान करते हैं। हम यहां बैठे हैं तरंगें निकलती हैं T.V. Mob की तरह जो अपने यंत्र से Tunning कर लें स्टेशन परमात्मा है। गुरु रेडियो हैं। तरगें संगीत है। गुरु की कृपा हो जाये तो कृपाएं होने लगती हैं। यदि कृपाएं नहीं हों तो कुछ भी नहीं मिलता। गुरु का अर्थ है मरुस्थल। मरुस्थल में तुम्हें मरुधान मिल गया। अज्ञानियों की भीड़ में तुम्हें कोई जागा हुआ पुरुष मिल गया। सोऐ हुये लोगों में से तुम्हें कोई मिल गया जो सोया हुआ नहीं है। वही तुम्हें जगा देगा। श्रद्धा जगाओ और श्रद्धा के सहारे तो परमात्मा की ओर जाना है। इसलिए गुरु पाथेय है। बिना गुरु के

पाथेय को पकड़े हुये तुम जा नहीं सकेंगे। यात्रा कठिन है। गुरु की कृपा हो जाये तो एक बीज़ बड़ा पेड़ बन जाता है। जिंदगी जीने के लिए है, कैसा उपाय है। वो सद्गुरु को भेजता है कि धारा के साथ कैसे चलना है। आनंद में रहना है। सद्गुरु हमेशा बीज़ देगा, वृक्ष नहीं। फार्मूला देता है पकाकर खिलाएगा नहीं। साधन देता है ज्ञान का दीया देता है। रोशनी आगे आगे चलती है जैसे दीपावली हो। सब रिश्ते कहीं न कहीं पर रुक जाते हैं। रिश्तें भी कुछ समय तक ही साथ देते हैं। 9 महीने 9 साल तक माँ 18 साल तक पिता। लेकिन सारे जन्म तक साथ देता है वो सद्गुरु जो लोक परलोक तक। अंदर का दीया जलाते हैं। 'शिवा' जी के पीछे गुरु की शक्ति साथ देती थी। वीरता का सूर्य पश्चिम से उगता है। सारे पीछे से ही प्रगट होते हैं। एक साधारण कद काठी का आदमी के जीवन में गुरु अंदर उतरा। भारत का सिर ऊँचा कर दिया शिकागो में भूखे प्यासे रह कर विवेकानंद सम्मेलन में गये और सद्गुरु को याद किया बोले सद्गुरु आवाज मेरी है, शक्ति आपकी है। बोलते बोलते गला आवाज सूख गई। पानी पीया गुरु को पुकारा गुरुदेव यंत्र मेरा है वाणी आपकी है तो परमहंस अंदर उतर आये। दुनिया के लोग उसके पीछे पीछे चले। गुरु को हम चुनते नहीं बल्कि गुरु हमें चुनता है। परमहंस शिष्य की तलाश में थे। पर एक दिन नरेन्द्र (विवेकानंद) परमहंस के पास नौकरी माँगने गये। उन्होंने कहा घर पर हम 11 लोग हैं पर खाने को कुछ नहीं भूखे हैं सब। कोई नौकरी दिला दो। परमहंस बोले तुम नौकरी करने के लिए पैदा नहीं हुये हो, नौकरी देने के लिए तुम्हारा जन्म हुआ है। उन्होंने नरेन्द्र के सिर पर हाथ रखा और अपना शिष्य बनाया। और आखिर में मरने से पहले माँ काली की मूर्ति के सामने अपनी सारी शक्तियां सिद्धियां उनमें प्रदान कर दी। वही शिष्य नरेन्द्र भारत में विवेकानंद से प्रसिद्ध हुआ। सिकंदर के जीवन में ''अरस्तू'' आया। उसने 5 संदेश दिये। अपने मार्ग पर दौड़ो, परखो, आगे बढ़ने का जो रास्ता मिलता है दौड़ो। आज तक अपनी उपलब्धदियों को देखो और शुक्र मनाओ। वो एक चिंगारी ही थी कि वो घोड़ा दौड़ाता भारत के जेहलम तक आकर खड़ा हो गया। जिसके सपने देखते ही वह वक्त पास आयेगा।

अपनी खुशी को दुगुना करो। लस्सी और आंसुओं को बढ़ा सकते हो। पर अपने दुख को मत बढ़ाओ। चिंता की चक्की अपने आप घूमती है अपने आप चलती है। अपनी उदासियों को रोकिये, दृढ़ निश्चय समर्पण पूर्ण मन बुद्धि से समर्पित करना ऐसा भक्त कृष्ण को पसंद है। संतुष्टि आपको भगवान के पास ले जायेगी।

जिंदगी के बगीचे में अगर खिले हुये फूल हैं तो सारी पखुंडियां खिलनी चाहिए। इन्सान रुपया पैसा लेकर बैठा हुआ सुखी प्रसन्नता है। परन्तु खुशी तभी आती है जब सारी पखुड़ियां खिली हों। एक पंख वाला पक्षी कभी नहीं उड़ सकता। नाव भी दो चप्पूओं से चलती है। एक चप्पू से नाव नहीं चलती। कभी एक चप्पू से नाव को चलाओ तो वो गोल गोल घूमती है तो यात्रा नहीं होगी। कोहलू का बैल बन जायेगी। उसके पार जाना है, तो चप्पू चाहिए। ध्यान और सत्संग-दोनों को पंख बना कर उनके सहारे उड़ना है। धर्म के बिना आदमी आदमी नहीं है। आदमी फिर कली बन जायेगा। कली कितनी भी सुंदर क्यों न हो कुछ कमी रह जाती है। अभी तक फूल नहीं हुई तो आनंद कहां? तृप्ति कहां? गलत सही का विश्लेषण गुरु ही करवाता है। हमारी संस्कृति में गुरुओं का बहुत बड़ा स्थान होता है। राजा दशरथ के दरवार में गुरु वशिष्ठ जी का आसन लगा रहता था। कौरव धृतराष्ट्र जिसकी दृष्टि जा चुकी थी वहां भी उसके राज्य में गुरु व्यास जी का आसन लगता था। मार्ग दर्शन कराने वाले गुरु न हो और गुरु को नहीं माने वहां दुश्शासन, दुर्योधन पैदा होते हैं। गुरु के साथ अगर मगर, किन्तु परन्तु नहीं लगता जब गुरु के प्रति समर्पण है तब मंत्र काम आता है। गुरु विशिष्ट अयोध्या की ओर जा रहे थे किसी ने पूछा तो वो बोले। अयोध्या में राजा दशरथ के यहां ब्रह्म को ब्रह्म विद्या सिखाने जा रहा हूँ। यह है हमारे भारत की संस्कृति यहां भगवान् से ऊपर गुरु हैं। पश्चिम में मनोवैज्ञानिक को गुरु कहना शुरू कर दिया है। (Family Dr) मनोवैज्ञानिक-मन का ज्ञाता नहीं है। मन के संबंध में जानकारी है उसे पर वो भी उधार की। स्वयं के मन के बारे में उसे कुछ नहीं मालूम मन के सम्बन्ध

में दूसरों ने जो कहा है उसका संग्रह किया है। उसने तभी कहा है कि मनोवैज्ञानिक तकनीशिन है। यहां कवि और ऋषि में फर्क है। कवि छलांग लगाता है एक क्षण में कल्पना के आसमान पर पहुँच जाता है फिर गुरुत्वाकर्षण खींच लेता है। उसकी कविताओं में हो सकता है। परमात्मा की ही बात हो चाहे उसके मुँह से शराब की वास ही क्यों न आये। उसके गीत उपनिषदों को भी मात करें। उसका जीवन ऐसा फीका हो सकता है यहां कभी कोई फूल खिलें इसका भरोसा ही न आये यही फर्क है कवि, और ऋषि में ऋषि जो कहता है, वही उसका जीवन है। सच तो यह है कि कवि का जो जीवन नहीं है उससे ज्यादा वो कह देता है। और ऋषि का जो जीवन है, उससे वह हमेशा कम ही कह पाता है। उतना नहीं कह पाता। क्योंकि वो शब्दों में उतना अटकता नहीं है उसके पास बहुत से शब्द छोटे पड़ जाते है। जीवन तो सागर है पर वह, जो कह पाता है वह बूंद ही हो जाती है।

शिष्य होने का अर्थ है अपना हाथ गुरु के हाथ में दे दिया। दे दिया अपना आप गुरु के हाथ में इस भरोसे से कि गुरु के हाथ में परमात्मा का हाथ छिपा है। शिष्य का अर्थ है कि परमात्मा तो दिखाई नहीं पड़ता। गुरु दिखाई पड़ता है। सद्‌गुरु का काम है, जिसे अपना पता नहीं है उसे अपना पता बता दे। वह जो जीवन परम सत्य है उससे संबंध जुड़ा दे। सद्‌गुरु व्यक्ति नहीं है इसलिए पूर्ब के मनीषी सद्‌गुरु को परमात्मा कहते हैं। इसलिए मैं फिर से दोहरा रही हूँ कि सद्‌गुरु को खोजना पड़ता है, मनोवैज्ञानिक को खरीदना पड़ता है। Dr. मनोवैज्ञानिक धन से मिलता है सद्‌गुरु तो मन को चढ़ाने से मिलता है। सद्‌गुरु के मिलने से अंदर की शक्ति जागती है-हजरत निजामुदीन जूती पहिन रहे थे। एक आदमी उनसे कुछ मदद माँगने आया। उन्होंने वही जूती दे दिया-जाओ इसको ले जाओ। वो जूता सिर पर रख कर जा रहा था-उसने देखा एक व्यक्ति जूता सिर पर रख कर जा रहा था। इस धरती पर कोई यह महान पुरुष है। अमीर खुसरो भी 6 ऊंटों को धन से लाद कर जा रहा था-उसने महसूस किया गुरु की खुशबू आ रही है उसने कहा यह जूता मुझे

दे दो। उसने कहा नहीं, यह आशीर्वाद दिया है उसने कहा जो कुछ मेरे पास है रख लो। वो मान गया उसने 6 ऊँट उसके हवाले कर दिये और जूती ले ली और गुरु के पास आया और गुरु के पांव में पहना दी। गुरु ने पूछा कितने में सौदा हुआ। उसने कहां 6 ऊँट दिये हैं। ओलिया ने कहा ऊपर जा कर बोलूंगा कि एक नेक आदमी को छोड़ आया हूँ धरती पर मरने से पहले वो बोल गये थे कि अमीर खुसरो को मेरे साथ कब्र में दबा दिया जाये-और हजरत निजामुदीन के साथ अमीर खुसरों की क्रब है बगल में अनन्त प्रेम के सामने गुरु खड़ा है-

कृष्ण के सामने ज़रासंध दुर्योधन सब साथ खड़े थे। पर क्योंकि दिल के अंदर प्रेम नहीं था-वो नहीं ले सके। दूसरी तरफ बिदुर थे भगवान मदद करते हैं वो मेहर भी करता है तो बहाना देते हैं सहायता करते हैं-किसी और को गुरु भी चुनता है। शांति शिव आनंद की शक्ति जो है वह गुरु है। सद्‌गुरु शाह का शहनशाह।

ooo

आत्म विस्मृत

हमारे देश का दुर्भाग्य घटित हुआ कि हम धर्म की बातें बहुत करते हैं लेकिन साहस की जरा भी नहीं करते और हमें यह पता नहीं कि बिना साहस के कभी कोई धार्मिक होता ही नहीं। क्योंकि साहस के अभाव में जीवन के केन्द्रीय तत्व जो विकसित नहीं होते। इन्सान को इतना साहस चाहिए कि मृत्यु के सामने कोई खड़ा हो सके हम लोग धर्म की बातें करते हैं परन्तु उतना ही हम मौत से डरते है जिसका कोई हिसाब ही नहीं। जिंदगी की जंग में सिपाही होना जरूरी है मन सधा होगा तो कभी गलती नहीं होगी-अकल से जीना होश नहीं खोना। दो मेंढक दोनों एक साथ खेल रहे थे। पास पड़ी मिट्टी के बर्तन में दही कि हांड़ी पड़ी थी। उसमें गिर गये। बार बार उछाल मारें पर हांडी दही की चिकनाई बहुत थी। बाहर निकल नहीं पा रहे थे। एक ने सोचा मरना ही है तो मेहनत क्यों करनी वो तो निढ़ाल हो कर पड़ा रहा। दूसरे ने सोचा जब तक दम है मुझे लड़ना है कायरों की मौत नहीं मरना डरपोक आदमी बहुत जल्दी दूसरों की हिम्मत तोड़ देता है। लेकिन जब मेंढक ने दूसरे मेढ़क को मरते देखा तो वो और ज़ोर ज़ोर से उछलने लगा। थोड़ी देर में नीचे तल पर कुछ कठोर सी चीज पांव के नीचे आई तो एक दम वो उछला और बाहर आ गया। थोड़ी देर बाद सोचा क्या चीज होगी। पर उसे नहीं मालूम कि वो बच गया बस। वो चीज मक्खन का गोला था जो उसके कदमों के नीचे आया। उस मेंढक को सहारा देने वाला कोई ओर नहीं था। उसका अपना परिश्रम साहस था वो उछला कूदा गतिशील होने से बाहर आ गया। इसी तरह हमारे अंदर अनेक भूकम्प हैं उनको जीतने का साहस होना चाहिए। डरपोक आदमी के भय से डरपोक लोग ही उसके पास बैठते हैं

चमगादड़ के घर मेहमान जायेगा तो वो उसको कहां बैठायेगा। बोलेगा हम तो लटके हैं तुम भी लटक जाओ। रोगी के पास रहोगे तो रोगी बनोगे। इसलिए हमनें अपना साहस आत्म विश्वास नहीं खोना है। जितने भी दुख है उनका मूल कारण यही है कि हम आत्म विस्मृत है। उसी आत्म विस्मृति से भय दुख निराशा से ग्रसित हैं। संत ''एक नाथ'' के पास एक आदमी आया कि मुझे ज्ञान दीजिए-उन्होंने उसे देखा और कहा अपना हाथ दिखाओ-उसने हाथ आगे किया, संत ''एकनाथ'' ने कहा तुम्हारे हाथ में जीवन रेखा दिख ही नहीं रही-तुम 7 दिनों के अंदर तुम्हारी मृत्यु हो जायेगी। उसने अपना हाथ खींचा और भागा अपने घर की ओर-बड़बड़ाया 7 दिनों के अंदर मृत्यु हो जायेगी? मेरे बहुत से काम अधूरे पड़े हैं। और पहुँचे हुये संत ने कहा है तो सही कहा होगा। जब संत के पास आया तो अकड़ा हुआ था पर अब घर में आकर कंपकंपाता हुआ बिस्तर पर गिर पड़ा। घर के लोगों ने समझाया ऐसे कहीं कोई मौत आती है? पर उस पर कुछ भी असर नहीं हुआ सातवें दिन जब सूरज ढ़लने के करीब आया तो संत ''एक नाथ'' उसके घर आये-उसको देखा पर वो उठने के काबिल भी नहीं था-उसने दोनों हाथ जोड़े-और कहा अब क्या करने आये हैं? मैं तो जा रहा हूँ मौत आ रही है और मुझे ले जायेगी। संत ''एक नाथ'' ने कहा एक प्रश्न पूछने आया हूँ। इन 7 दिनों में कुछ पाप किया? सिवाय प्रभु का नाम जपने के। महाराज आप भी हद करते हैं। मौत सामने खड़ी है तो पाप का ख्याल मन में कैसे आये? ''एकनाथ ने कहा उठ तेरी उमर की लकीर बहुत लम्बी है-यह मैंने तेरे प्रश्न का जवाब दिया था। लोग विश्वास कर लेते हैं, वे विवेक तक नहीं पहुँच पाते। जो लोग चुप-चाप स्वीकार कर लेते हैं, वे स्वयं के अनुभव तक नहीं पहुँच पाते। जो अंधें हैं और मान लेते हैं, वे भी स्वयं के अनुभव तक नहीं पहुँच पाते। दूसरे कहें कि प्रकाश है तो जरूर होगा, फिर उनकी यात्रा वही बंद हो जाती है। यात्रा तो तब आरम्भ होगी जब बेचैनी बनी रहे। और बेचैनी तब बनती है जब हमें लगेगा कि कोई चीज है, लेकिन मुझे दिखाई नहीं देती तो मैं कैसे मान लूं। मैं स्वयं देखूं तो मानू। मेरे पास वो आँख हो पर है नहीं : मेरे पास वो आँख

होती तो मैं स्वीकार करूँ। लेकिन हमारे ज्योतिषियों ने पंडित, पुरोहितों ने कहा कि तुम्हें अपनी आँख की क्या जरूरत है। बुद्ध, महावीर, नानक, कृष्ण इनकी आंखों से देखो इनके पास जो आंखें है, वह काफी नहीं है? गीता पढ़ो मजा करो कृष्ण को दिखाई पड़ता था, सो उन्होंने कह दिया। अब आप सभी को देखने वाले बता गये हैं। तुम्हारा काम है विश्वास करना। ज्ञान तो उपलब्ध हो गया है। अब तुम्हें देखने की जानने की क्या जरूरत है। आदमियों को अंधा रखने के लिए उस उपदेश ने काम किया। अधिकतर लोग पृथ्वी पर अन्धे रह गये। और आने वाली पीढ़ी भी शायद अंधी ही रहेगी। क्योंकि अंधेपन को तोड़ने की बुनियाद होती है उसकी हत्या कर दी गई है विश्वास का विष देकर उसको समाप्त कर दिया गया है। अगर हम एक दूसरे की सुनी सुनाई बातों का सहारा सुन छोड़ेंगे कुछ भी उपलब्ध नहीं होगा। जब तक कोई चीज पूर्ति कर रही है उसकी खोजबीन पैदा नहीं होती और जब कोई सहारा नहीं है और कोई मार्ग नहीं है दूसरों से मिलने वाला, तब आदमी के भीतर वह चुनौति जन्म लेती है जिससे वो मार्ग की खोज में निकलता है लेकिन हम धार्मिक लोग आलसी बहुत हैं। बड़ी जल्दी मौलवी पंडितों की बातों में आ जाते हैं और खुद को भूल जाते हैं और परमात्मा पर छोड़ कर आराम से बैठ जाते हैं।

इसलिए हमें अपना साहस अपना आत्मविश्वास खोना नहीं है। छोटी-छोटी बातों से घबरा कर आदमी छोटा हो जाता है। छोटी सोच और पांव की मोच इन्सान को आगे नहीं बढ़ने देती। बड़ी सोच बड़ा लक्ष्य इन्सान को बड़ा बना देती है। जीतता वही है जिस मैं सब्र साहस हो बड़ी से बड़ी बीमारियों से लड़ सकता है। जिसके पास साहस है धैर्य है, वह अड़िग हिमालय है। हर हादसा हर समस्या हमें एक नया सबक सिखा जाती है हमें मजबूत बना देता है। और मजबूती तभी आयेगी जब हम अंदर से मजबूत होंगे जीवन में जो खतरे के मौके हों उनका स्वागत करना चाहिए। नीत्शे फिलासफर कहता है, खतरे में जीओ। खतरों के खिलाड़ी बनो। लेकिन हम सोचते हैं

कि सुरक्षा हो बैंक बैंलस हो, कोई डर न हो, और हम चुपचाप जिंदा रहें। इस व्यवस्था और इस सुविधा को जुटाने में ही मर जाते हैं। जापान ने सात आठ बरसों से एक अलग तरह के आदमी पैदा करने की कोशिश की है उन्होंने उसे वे सुमुराई कौम कहते हैं। वह साधु भी होता था और सैनिक भी होता था। सुन कर हैरानगी लगती है कि 'साधु' और 'सैनिक' का क्या सम्बंध? जापान में जो ध्यान के मंदिर हैं उनमें ध्यान के साथ जूडों भी सिखाते हैं, कुश्ती लड़ने की कला भी सिखाते हैं, तलवार चलाना तीर चलाना भी सिखाते हैं। जापान के साधकों ने धीरे-धीरे यह बात अनुभव की कि जिस साधक के जीवन में साहस और बल के पैदा होने की सम्भावना नहीं होती। उस साधक का मस्तिष्क ही रह जाता है। उसका कोई गहरा केंद्र विकसित नहीं हो पाता। वह पंडित हो सकता है, साधु नहीं हो पाता वह तथाकथित ज्ञानी हो सकता है कि उसे गीता के श्लोक याद है तोते की तरह रटे हैं।

हमें भगवान् पर अति श्रद्धा है। और उसी भगवान् के सहारे हम जीते हैं कि भगवान् अपने भक्तों की रक्षा करता है। पृथ्वी का सबसे बड़ा सोमनाथ जी का मंदिर है। सबसे धनी मंदिर था वो उस समय 1200 पंडित पुजारी थे उस मंदिर में गजनबी आया सोमनाथ मंदिर पर हमला किया-उससे पहले आसपास के राजपूतों ने खबर भेजी कि हम किसी भी समय आ सकते हैं लड़ सकते हैं। पुजारियों ने कहा तुम्हारे लड़ने की क्या जरूरत है जो भगवान् सबकी रक्षा करता है, उसको तुम्हारी रक्षा की क्या जरूरत है। पुजारियों के कथनानुसार तर्क में बल तो था। राजपूतों को भी लगा कि बात ठीक है। सबका रक्षक अगर अपनी रक्षा नहीं कर सके तो फिर हमारी रक्षा क्या करेगा। वो सोच ही रहे थे कि 'गजनवी' से कोई लड़ा नहीं और वो सीधा मंदिर में आया। उठाई गदा और 'शिवलिंग' के टुकड़े-टुकड़े कर दिये। भगवान् चारों खाने चित्त। पुजारी चौंके कि यह भगवान को क्या हो गया और उन्होंने मूर्ति में बहुमुल्य हीरे जवाहारत छिपा के रखे थे। वह सब बिखर गये। पुजारी मन में सोचते अगर गलती से कहीं हमारा पांव का अंगूठा भी भगवान् को लग जाये तो शायद हमें

कोढ़ हो जाये या बीमार पड़ जायें मौत भी आ सकती थी। लेकिन 'गजनवी' का तो बाल भी बांका नहीं हुआ-सिर में दर्द भी नहीं हुआ उसके लिए तो भगवान् था ही नहीं-ऐसी सोच है हमारी सब कुछ छोड़ छाड़ के भगवान् के भरोसे बैठे रहते हैं। हमने केवल बुद्धि से गीता कण्ठस्थ कर ली और महावीर के वचन याद कर लिए और बैठ कर व्याख्या करने लगे। गुरु शिष्य बैठे हैं, और फजूल का ज्ञान झाड़ रहे हैं जिनका जीवन से कोई सम्बंध नहीं है। सारा मुल्क पूरी कौम कमजोर हो गई। क्योंकि हमने जीवन की शक्ति के वास्तविक केंद्र विकसित जागृत नहीं किये। एक बार किसी म्युजियम में बड़ी अद्‌भुत मूर्ति देखी वो मूर्ति किसी सैनिक की थी और उसके हाथ में नंगी तलवार थी। और जिस हाथ में नंगी तलवार है, उस तरफ का चेहरा तलवार की तरह ही चमक रहा था। वो चेहरा उसका वह हिस्सा ऐसा मालूम पड़ता जैसे महाभारत के किसी योद्धा का रहा होगा, और उसके दूसरे हाथ में एक दीया है। और दीये की ज्योति उसके चेहरे के दूसरे हिस्से पर पड़ रही है। चेहरे का वह हिस्सा ऐसा मालूम होता, जैसे बुद्ध का रहा होगा महावीर का हो क्राइस्ट का रहा हो। एक हाथ में तलवार और एक हाथ में दीया है। लेकिन मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि हाथ में या तो तलवार होनी चाहिए या दीया होना चाहिए। दोनों चीजें एक ही आदमी के हाथ में कैसे हो सकती है ? लेकिन गहराई से सोचो तो यह जो दीया है उसी आदमी के हाथ हो सकता है, जिसके हाथ में तलवार हो। तलवार पकड़ने और तलवार चलाने का सवाल नहीं है। तलवार कमजोर लोग चलाते हैं। लेकिन जिनकी जिंदगी तलवार हो जाती है, वे तलवार नहीं चलाते-उन्हें तलवार चलाने की जरूरत नहीं रह जाती। उनकी पूरी जिंदगी एक तलवार ही होती है। तलवार हाथ में होने का अर्थ यह नहीं कि किसी को काट डालेंगे। हत्या कर देगें। हत्या वही करता है, जो अपनी हत्या से डरता है। हिंसक तो केवल भयभीत ही होता है। तलवार अहिंसक के हाथ में ही हो सकती है। असल में अहिंसक एक तलवार ही होता है। खुद एक तलवार होता है। वह तो अहिंसक भी हो सकता है। और यह जो दीया है, यह जो शांति का दीया है, यह उसी के हाथ में शोभा पा सकता है।

जिसके प्राणों में वीर्य की तलवार पैदा हो गई हो ऊर्जा की कुंडली, शक्ति की तलवार पैदा हो गई हो-जब एक तरफ व्यक्तित्व पूरी तरह ऊर्जा से भर जाता है और दूसरी ओर पूरी शांति से तभी परिपूर्ण व्यक्तित्व उत्पन्न होता है। अब तक दो तरह की बातें हुई है दुनिया ने हम लोगों के हाथों में दीऐ रख लिए हैं और हम बिल्कुल कमजोर हो गयें। इतने कमजोर कि उनका दीया भी कोई फूंक मार के बुझा दे तो वह इन्कार भी नहीं कर सकते कि आप ने हमारा दीया क्यों बुझा रहे हो वे सोचेंगे कोई बात नहीं यह चला जायेगा तो हम फिर से जला लेंगे या अंधेरे में ही रह लेगें। तो एक यह लोग हैं जो दीया पकड़ने वाले लोग हैं। जिन के हाथों में दीया बचाने की सामर्थ्य नहीं है नपुंसक लोग। दूसरी ओर ऐसे लोग भी है जिन्होंने दीये की फिकर छोड़ दी, सिर्फ तलवार लेकर चलाने में लग गये। उनके पास न दीया होने से अंधेरे में उन्हें दीखता नहीं कि वह किसको काट रहे हैं अपने को दूसरे लोगों को काटे चले जाते हैं। उनसे कोई दीया जलाने की बात कहे तो कहते हैं, बकवास मत कर जितनी देर दीया जलाएगें। उतनी देर में तलवार चला लेगें। जिस धातु से दीया बनायेंगे, उससे एक तलवार बन जायेगी इतना तेल कौन खराब करे। जिंदगी तो एक तलवार चलाना है पश्चिम के लोग अंधेरे में ही तलवार चलाये जा रहे हैं और पूर्ब के लोग बिना तलवार के दीया लिए खमोश बैठे हैं। दोनों ही रो रहे हैं सारी दुनिया रो रही है। ठीक आदमी पैदा नहीं हो सका। ठीक आदमी का जीवन शांति का दीया भी हो सकता है और तलवार भी होता है। यह दोनों बातें जिस व्यक्तित्व में फलित होती हैं उसी व्यक्ति को योगी व्यक्ति कहना होगा।

०००

दशा, दिशा या दुर्दशा

हमारे भीतर हजारों-हजारों विचार एक साथ बैठे हुये हैं और वो सब विचार हमें अलग अलग दिशाओं में खीच रहे हैं और तब हमारी यह अस्त व्यस्त दशा हो गई है। जिसके परिणाम में विक्षिप्ता बिल्कुल स्वभाविक है। क्योंकि हजारों सालों से अन्तर्विरोधी विचार मनुष्य के मन में इकट्ठे हो गये हैं। एक साथ आदमी के भीतर बैठे हैं। हजारों दिशाओं से पैदा हुये ख्याल उसके भीतर बैठे हुये हैं। हजारों पीढ़ियां एक साथ एक-एक आदमी के भीतर जी रही हैं। एक जमाना था कि आदमी को सबकी बातें पता नहीं थी। अपने अपने घेरे थे, अपने अपने घर की बातें ही पता थी तो इतनी उलझन नहीं थी। अब दुनिया बहुत करीब आ गई है। और सबकी बातें पता चल गई हैं तो आदमी की उलझन बिल्कुल पागलपन पर पहुँच गई है। अब सब उसकी समझ के बाहर हो गया है। खैर बहुत अच्छी हालत पहले भी नहीं थी। अगर हिन्दू को मुसलमान की बातें पता नहीं थी जैन को ईसाइयों की बातें पता नहीं थी तो भी कोई फर्क नहीं पड़ता। दुनिया के सारे धर्म शिक्षक सारे उपदेशकों ने आदमी के मन को विश्वास दिलाने के लिए इन लोगों ने एक उत्पात खड़ा कर दिया है और आदमी का मन इन सारी बातों में घबराया हुआ खड़ा रह गया है वह सबकी बातें सुन लेता है और सब के प्रभाव उसके भीतर छिप जाते हैं। और फिर वह विरोधी बातें सुन लेता है विरोधी दिशाओं में उसके प्राणों को खींचने लगते हैं। धर्म गुरु जो कहते हैं विश्वास करो जैसे जैनियों के 24 तीर्थंकरों में एक तीर्थंकर हुये मल्लीनाथ। दिगम्बर कहते हैं कि वे पुरुष थे और श्वेताम्बर कहते हैं कि वो स्त्री थे मल्लीनाथ नहीं मल्लीवाई थे। दिगम्बर कहते हैं मल्लीनाथ थे। और दोनों कहते हैं कि हमारी

बात नहीं मानोगे तो नरक में जाओगे। स्त्री कभी तीर्थंकर नहीं हो सकती। आदमी को समझाने के लिए कि हम जो कहते हैं उस पर विश्वास करो। आदमी बेचारा क्या करे? एक दूसरे की बातों पर हंसी आती है, लेकिन अपनी बेवकूफियों पर कोई भी नहीं हंसता? ईसाई कहते हैं कि ''जीसस'' कुंवारी लड़की से पैदा हुये। और जो नहीं मानेगा नरक में जाना पड़ेगा। अरे हुये होंगे कुंवारी कन्या से मान लेने में क्या हर्ज है। न मानने से नरक में क्यूं जायेंगे? कुंवारी लड़की से बच्चा पैदा हो सकता है? न समझी की बात है लेकिन उधर मुसलमान कहते हैं मुहम्मद साहब घोड़ी पर सवार होकर सीधा स्वर्ग गये। यह हैरानगी की बात है। घोड़ी पर सवार सदेह गये यह हजम नहीं होता क्योंकि भला घोड़ी मोक्ष को प्राप्त हो ही नहीं सकती, हाँ घोड़ा होता तो शायद जा सकता था। क्योंकि स्त्रियों को स्वर्ग जाने की अनुमति नहीं है। पुरुष तो मोक्ष में जा सकता है क्योंकि वो पुरुष है फिर एक बात और है। मुहम्मद सदेह कैसे चले गये। देह यहां ही छोड़नी पड़ती है। देह तो पृथ्वी की चीज है। पर मान लो तो ठीक नहीं, तो नरक में जाओगे। यह बात माननी ही पड़ेगी, क्योंकि एक ही ईश्वर है जगत में और एक ही उसका पैगम्बर है वो है मुहम्मद अगर उसकी बात नहीं मानोगे तो नरक में जाओगे। आदमी को डराया जाता है। मानो उसे तो आदमी मान लेता है कि शायद ठीक है। जैन मुसलमानों की बातें करते हैं। लेकिन जैन कहते है कि 'महावीर' का गर्भ एक ब्राह्मण स्त्री के पेट में आया लेकिन क्या जैनी तीर्थंकर कहीं ब्राह्मण के घर पैदा हो सकते हैं? असली और ऊंची जाति तो क्षत्रियों की होती है। तीर्थंकर हमेशा क्षत्रियों के घर पैदा होते हैं। ब्राह्मण तो भिखमंगा है। उसके घर तीर्थंकर कैसे पैदा हो सकते हैं? लेकिन महावीर का गर्भ तो एक ब्राह्मणी के पेट में आया था। देवताओं ने देखा कि गलती हो गई है, उन्होंने रातों रात उसका गर्भ ब्राह्मणी के पेट से निकाल कर क्षत्राणी के गर्भ में रख दिया-और उसके गर्भ से उसकी लड़की निकाल के ब्राह्मणी के गर्भ में रख दी। इन बेवकूफियों पर हंसी आती है कि देवता कहां से हो गये गर्भ बदलने वाले (सर्जन) सत्य के दावेदारों ने आदमी के मन पर

उसके चित्त के भीतर विचारों का ऐसा जाल खड़ा कर दिया है जो बहुत विरोधी है और इन्सान को सब दिशाओं की ओर खींचता है और इस जाल को खड़ा करने में भय का उपभोग किया गया है। अगर आप नहीं मानते तो नरक में जाओगे। यह विश्वास का जाल जबरदस्ती आदमी पर थोपा गया है। मानोगे तो स्वर्ग, नहीं तो नरक।

इन महात्माओं का अनुभव यही कहता है कि तुम्हारा विश्लेशण बहुत गहरा नहीं है। उन्होंने जीवन की गहराइयों को न समझा न परखा। इनकी आंखें पारदर्शी हैं। जरूर इन महात्माओं ने अपनी जवानी गलत ढंग से गुजारी होगी। तभी तो जवान लोगों से नाराज होते हैं। जब आप किसी बात की निंदा करते ही तो ख्याल रखना कि यह तुम्हारे अतीत की निंदा है जब कोई आदमी कहता है कि धन पाप है तो समझ लेना कि इसने अपनी जिंदगी धन कमाने में ही गंवाई होगी। जब कोई आदमी स्त्री के प्रति ऐसी भाषा बोलता है कि स्त्री स्वर्ग नहीं जा सकती तो और स्त्री नरक का द्वार है तो लगता इसने अपनी जिंदगी स्त्रियों के पीछे भागने में ही गंवा दी इसलिए यह आदमी अपनी ही बात बता रहा है। यहां ऐसी स्त्रियां हुई जो जीसस की ''माँ मरियम'' उससे ज्यादा पवित्र चेहरा कहां ढूंढ़ पायेंगे। महन्त कहते हैं स्त्रियां नरक का द्वार हैं। ठीक कहते हैं, इनके अनुभव में रही होगी। यहां तो 'मरियम', 'देवकी', 'कौशल्या' जैसी औरतें जो स्वर्ग का द्वार बनीं जिनसे देवता भी पैदा होने को तड़फते हैं। जरूर इन महात्माओं ज्ञानियों ने अपनी जवानी गलत ढंग से गुजारी होगी। तभी तो जवानों पर नाराज रहते हैं यहां जवान आदमी अपने जीवन में आस्था खो देता है, वहीं से पाप शुरू होते हैं। इन ज्ञानियों ने ऐसी बातें की हैं कि तुम कुछ भी करो गुनाह है। खाओ पियो गुनाह है, प्रेम करो, संबंध बनाओ गुनाह है। ऐसा सुन सुन कर गुनाहों से भरा हुआ आदमी कैसे ईश्वर को पुकारे। किस मुँह से पुकारोगे सिवाय पापों भरी जिंदगी है हमारी और तो कुछ दिया नहीं। किस मुँह से धन्यवाद दें। और यहां धन्यवाद नहीं है, वहां प्रार्थना पैदा नहीं होती। तुम हंस नहीं

सकते इसलिए कि पाप है उन्होंने यही कहा कि जिंदगी कांटों से भरी है। फूल यहां हैं ही नहीं। क्योंकि हमारी बगिया में फूल नहीं है। ऐसे जवान आदमी जहां जीवन अपने में आस्था डगमगा दे। वहां इन कमजोरों को क्यूँ इकट्ठा कर रहे हैं। यह आधे अधूरे लोग लूले लंगड़े सिर पर शास्त्र धारण किये रटे रटाए श्लोक कुरान की आयतें तोते की तरह रटे हुये हैं क्यूँ सुने इनके उपदेश? क्या है इनके अपने गढ़े हुये शास्त्रों की पुरानी नाव जो पार न ले जा सकती है। बस पानी पर टिकी है। भक्त, ज्ञानियों को चाहिए उसी मार्ग पर चले यहां फायदा हो रहा हो- शंकराचार्य के संबंध में एक बात मानी है कि एक बार वो काशी घाट में गंगा स्नान के लिए रोज जाते थे। एक दिन सुबह सुबह वो स्नान करके सीढ़ियां चढ़ कर जा रहे थे कि एक आदमी जाते जाते उनसे छू गया। वो बहुत नाराज हुये एक दम चिल्ला उठे कि तुझे इतनी भी समझ नहीं है कि तुम शूद्र हो और मुझे छू लिया। अभी अभी तो मैं नहा के निकला हूँ और तुमने छू कर अपवित्र कर दिया। उस शूद्र ने कहा, महाराज आपके ज्ञान की चर्चा सुनी थी मैंने सो उसी भ्रांति में मैं आ गया। ध्यान ही नहीं रहा कि मैंने सोचा दुनिया जब सब की सब माया है तो कौन शूद्र, कौन ब्रह्मा ? कैसा शूद्र कैसा ब्राह्मण सब सपना है, तो किसने किसको छुआ, जब छूना ही सपना है-यह सब ज्ञान मंच पर आपने ही तो कहा था सुनाया था फिर मैं पूछता हूँ कि आपकी देह अपवित्र कैसे हो गई कि आपकी आत्मा भी अपवित्र हो गई? क्योंकि देह तो अपवित्र है ही, तो जो अपवित्र है वह मेरे छूने से अपवित्र नहीं हो जायेगी। यह मेरी देह है, वह आपकी देह है? अपवित्र ने अपवित्र को छुआ। इसमें क्या फर्क पड़ता है। आपके भाषणों में मैंने सुना है कि आत्मा पवित्र है। शुद्ध बुद्ध चित्त सत्त आनंद है, तो मेरी आत्मा ने आपकी आत्मा को छुआ तो कोई अड़चन नहीं होना चाहिए, क्योंकि दोनों ही शुद्ध बुद्ध मिल गए। आनंद ही आनंद है, आप इतने नाराज क्यूं हो रहे हैं-शंकराचार्य कभी किसी से नहीं हारे थे- उन्होंने झुक कर उस शूद्र को प्रणाम किया और कहा तुमने मुझे ठीक बोध दिया। सत्य का फल आनंद है असत्य का फल है दुख, जहां

दुख पाओ, जानना असत्य है दुख एक कसौटी है। जितना दुख उतना असत्य है। यहां दुख पाओ समझना कि झूठ है कुछ। झूठ से दुख मिलता है। दुख सूख झूठ के साथ साथ चलता है। यहां थोड़ी सी आनंद की झलक मिले यहां थोड़ी शांति उतरे थोड़ी मौज उतरे वहां समझना की सत्य के करीब हैं। जहां आनंद उतरे वहां ही प्रभु को खोजना।

ooo

संकल्प

इन्सान का मस्तिष्क है विचार केंद्र। भाव केन्द्र है हृदय और ऊर्जा का केन्द्र है नाभि। नाभि जितनी सजग होगी उतना ही संकल्प तेज मजबूत होगा और जब संकल्प मजबूत होगा तो नाभि केंद्र विकसित होगा। यह दोनों बातें परस्पर निर्भर हैं। एक दूसरे से सम्बन्धित बातें है। जितना हम सोचेंगे पढ़ेंगे अच्छे विचारों को दिमाग में आने देंगे। उतनी ही हमारी बुद्धि का विकास होगा जितनी हमारी सोच ऊंची होगी सकारात्मक प्रेम भरी होगी उतना ही हमारा हृदय का केंद्र मजबूत होगा और जितना हम बड़ा संकल्प लेंगे उतनी ही हमारी आत्मात ऊर्जा मजबूत होगी कोई उन्नति के शिखर पर पहुँचता है तो उसका संकल्प ही उसे पहुँचाता है। किसी भी ऊँचाई पर पांव नहीं पहुँचते संकल्प ले जाता है। पांव को तो सलाम है ही-वो तो हमेशा साथ ही होते हैं मगर संकल्प मजबूत है तो अंदर की आग और भड़क जाती है। और संकल्प उसे शिखरों तक पहुँचा देता है। महात्मा गांधी जी को जब ट्रेन से धक्का देकर बाहर निकाल दिया था। उनके अंदर एक आग भभक उठी। उन्होंने संकल्प लिया कि तुमने मुझे ट्रेन से निकाला है। मैं तुम्हें देश से निकालूंगा। भीतर की आग सम्भाल के रखी अपने संकल्प को मजबूत बनाया। भागवत का पहला श्लोक है-(जैसा संकल्प करोगे-वैसा ही बन जाओगे) जिस दिन संकल्प ले लिया कि मुझे सरल सहज रहना है उस दिन हम उच्च कोटि के शासक बन जायेंगे-संकल्प का अर्थ है जो हम चाहते हैं जो हमें ठीक से दिखाई देता है रास्ता है ऐसा मालूम होता है-उस रास्ते पर चलने का आत्मबल जुटाना है। दृढ़ता से साहस जुटाना है। किसान के खेत की फसल पक गई थी। किसान ने खेत को देखा और कहा बस अब फसल काटनी है एक चिड़िया

उसी खेत के पेड़ पर अपने बच्चों के साथ घौंसले में बैठी थी उसने अपने बच्चों को कहा फुदक फुदक कर उड़ा करो। अपने पंखों को मजबूत करो और मेरे पीछे पीछे चला करो-बच्चे कहते हैं माँ वो किसान पेड़ को भी काट देगा। उसने कहा नहीं अभी इसका संकल्प पक्का नहीं है कमजोर है। लेकिन तुम अपने पंखों को मजबूत करो संकल्प से अंदर एक बल खड़ा होता है-किसी किताब में पढ़ा था एक अन्धा फकीर गांव में भीख मांग रहा था। उसके पास आंखें तो थी नहीं, भीख मांगते हुये वो एक मस्जिद के द्वार पर पहुँच गया मस्जिद के द्वार पर उसने अपना हाथ फैलाया और मांगा कि मुझे कुछ मिल जाये, मैं भूखा हूँ। पास गुजरते लोगों ने कहा अरे पागल यह वैसा घर नहीं है, यहां भीख नहीं मिलती है। यह तो मस्जिद है, यहां कोई रास्ता नहीं, तूं कहां भीख मांग रहा है। आगे बढ़ वह फकीर हंसने लगा और उसने कहा कि अगर भगवान् के घर से कुछ नहीं मिलेगा तो फिर कहां मिलेगा? यह तो अंतिम घर है। अरे भूल से मैं अंतिम घर आ गया हूं। अन्तिम मकान के सामने आ गया हूँ। मैं यहां से कैसे हटूं और हट भी जाऊं तो कहां जाऊं?

लोग हंसने लगे। उन्होंने कहा-पागल! यहां कोई घर रास्ता नहीं है। तुझे कौन देगा। उसने कहा, यह सवाल नहीं है। लेकिन भगवान् के घर से अगर खाली हाथ लौटना पड़ेगा तो फिर हाथ कहां भरे जा सकेंगे? फिर तो कहीं भी नहीं भरे जा सकेंगे अब आ ही गया हूँ इस द्वार पर तो हाथ भर के ही लौटूंगा। वह वही रुक गया और एक वर्ष तक उसके हाथ वैसे ही फैले रहे। गांव के लोग उसे पागल कहने लगे। कहने लगे कि तू ना समझ है, कहां हाथ फैलाऐ हुये बैठा है? यहां कुछ भी मिलने वाला नहीं है। लेकिन वह फकीर भी एक ही था, वह बैठा ही रहा, बैठा ही रहा, बैठा ही रहा और एक वर्ष बीत जाने पर गांव के लोगों ने देखा शायद उस फकीर को कुछ मिल गया। उसके चेहरे की रौनक बदल गई है। उसके आस पास एक शांति की हवा उठने लगी, और उसके आस पास रौशनी खड़ी हो गई, एक सुगंध बहने लगी वह आदमी नाचने लगा। उसकी आंखों में यहाँ आंसू थे, वहां

मुस्कराहट आ गई। वह जैसे मुर्दा था, इस एक वर्ष में उसके प्राण फिर से खिल उठे। वह नाचने लगा। लोगों ने पूछा कि क्या मिल गया तुम्हें? उसने कहा कि यह असम्भव था कि जो न मिलता क्योंकि मैंने तय कर लिया था। वह उपलब्ध हो गया और मैंने तो शरीर के लिए रोटी मांगी थी और मुझे आत्मा के लिए रोटी मिल गयी है। मैंने तो शरीर की भूख मिटानी चाही थी और मेरी आत्मा की भी भूख मिट गई है। मैंने कुछ भी नहीं किया, लेकिन मेरे प्रयास के पीछे मैंने संकल्प को खड़ा कर दिया। अगर प्यास है तो उसके साथ पूरा संकल्प भी चाहिए। मेरा पूरा संकल्प साथ था। मेरी प्यास मिट गई। मैं उस जगह पहुँच गया।

जहां वह पानी मिल जाता है, जिसके पीने से कोई प्यास नहीं रह जाती सो संकल्प को मजबूत बनाना और उस पर चलने का साहस करना आगे बढ़ने का। दुनिया में बहुत से लोग हुये हैं जिन्होंने बहुत अच्छी अच्छी बातें कहीं है। अगर सुनी समझी होती तो दुनिया में अब तक सब कुछ हो गया होता। लेकिन न महावीर कुछ कर सके, न क्राइस्ट, न कृष्ण और न मुहम्मद। कोई ऐसा नहीं कर सकता जब तक कि आप ही करने को तैयार न हो नदियां वही जा रही हैं झरने तालाब चश्में पानी से भरे पड़े हैं पर हमारे हाथ में पात्र नहीं हैं खाली हम चिल्लाते हैं कि मुझे पानी चाहिए। चश्में, झीलें, तालाब लेकिन पात्र तो चाहिए संकल्प का पात्र जहां नहीं है वहां साधना की कोई तृप्ति, कोई संतोष नहीं है।

कृष्ण को देखो, उनका संदेश सुनो क्या है? उनका संदेश 16 कलाओं में एक कला कृषकाय है, चुम्बकीय शक्ति है। कृष्ण के उपदेश में महत्वपूर्ण कड़ी क्या है कि अपने अंदर की शक्तियों को पहचानो खुशी इकट्ठी करना सीखें। जितने ऊंचे पहाड़ है उतनी ही परेशानियां है। पर पहाड़ अड़िग है। हिम्मत रखना, दृढ़ निश्चय से खड़े रहने का संकल्प लो हिम्मत करो। हौंसला बनाये रखो। जब मनुष्य संघर्ष करना छोड़ देता है तो सोचो उसने हार मान ली। अपनी नाभि का केंद्र जिसका सजग होगा उतना ही संकल्प तीव्र होगा

नाभि संकल्प का केंद्र है। उसी से आत्म की ऊर्जा उपलब्ध होगी। जितना आप संकल्प करेंगे उतनी ही नाभि का केंद्र विकसित होगा। जितना मजबूत विचार होंगे उतनी ही बुद्धि विकसित होगी जितना हम प्रेम करेंगे उतना ही हृदय विकसित होगा। जितना संकल्प करेंगे उतना ही अंतऊर्जा का केंद्रीय चक्र उसके साथ वह केन्द्रीय कमल है वह हमारी नाभि केंद्र को विकसित करेगा।

०००

आओ आंगन बड़ा करें

हमारे छोटे से घर का एक आंगन है और उस घर के आंगन से आकाश की क्या उपमा है? क्या तुलना है? मगर फिर भी एक बात तो है कि हमारे छोटे से आंगन में जो उतरा है। वह आकाश ही है हमारा छोटा सा। छोटा सा आंगन भी आकाश नहीं है। आकाश बहुत बड़ा है। हम आकाश चाँद, तारों को अपने आंगन में उतारें। फिर भी जो उतरा है वह आकाश ही है। छोटी सी सागर की बूंद शबनम बन कर उसी आकाश से उतर कर हमारे आंगन में उतरती है। हम उस बूंद में सागर देख सकते हैं, क्योंकि इसी बूंद में सागर का राज छुपा है। बूंद और सागर में प्रेम है सारी नदियां समुद्र सम्भालता है। फिर प्रेम की बूंद बन कर लौटाता है हमें। वह भी प्रेम के कारण। प्रेम में सारा राज छिपा है। आंगन में भी प्रेम ही छिपा है। उसी प्रेम में भक्ति है, जो खुले आकाश से आती है। आकाश में उड़ती है। अपने आंगन में हमने भेदभाव की दीवारें लगा रखी हैं, और आंगन छोटा कर देते है। आंगन को खुला करने के लिए नफरत की दीवारें गिरानी होगी।

आओ मिल कर गिरायें
बीच की दीवारें
ताकि आंगन बड़ा हो सके

संगच्छध्नं संवदध्नं संवोभनांसी जामताम्
देवाभागं यथापूर्वे संजनानामुपासते ॥

ऋग्वेद

ऋग्वेद का उपदेश है, जिस घर में एकता हो, भावनायें एक बनाओ भेष-भूषा एक हो। मिल कर बोलना सीखो मन विचार एक हो जायें नए नए ढंग से। मुट्ठी एक बनाओ परिवार की-जैसे देवता अलग-अलग हैं लेकिन एक जुट होकर उन्होंने सागर का मंथन करके अमृत पाया तुम्हारा खाना पकाना चूल्हा एक हो। चूल्हा अलग-अलग होगा तो दिल भी अलग हो जायेंगे। जिनका खाना-पीना, पिआऊ एक है वहां बरकत है। पति पत्नी में तालमेल हो दोनों एक आदर्श बना कर चलें समृद्धि बढ़ जायेगी। भगवान् की कृपाएं बरकत बढ़ जायेगी। नेतृत्व में सबको जोड़ना। घर का मुखिया में लीडरशिप की quality होनी चाहिए जो सब को एक कर दें।

मुखिया, मुख सो चाहिए
खान-पान कहुं एक
पालई पौषय सकल अंग
तुलसी विवेक सहित

जैसे मुख (मुँह) एक है उसी से खाना खाते है और वो सब अंगों को पोषित करता है। इसी तरह घर का मुखिया सारे परिवार का नेतृत्व करता है पूरे घर को चलाता है कहां झुकना, कहां माफ करना-वो जानता है, कि रिश्ते कितने कीमती हैं।

मिट्टी की एकता देखो
उसकी एकता से ईंट बन गई
और ईंटों की एकता ने
दीवार बना दी
और दीवारों ने मिलकर घर बना दिया
देखो घर की एकता ने सब को
एक कर दिया।

दुनिया में सुख पकड़ना है तो सब मिल कर पकड़ें। हमारा हाथ हमें

सिखाता है। अंगूठा हमारा विश्वास है, धर्म है। अंगूठे को सबसे मिलना होता है। बाकी अंगुलियां बेकार हैं। अगर अंगूठा साथ न दें। अंगूठा मुखिया है, अंगूठा धर्म है। जैसे अंगूठे के बगैर अंगुलियां काम नहीं कर सकती। अगर अंगूठा साथ न दे। अंगूठा धर्म है ऋषियों ने कहा धर्मपूर्वक रहो- मुखिया यानि पिता अपने बच्चों को संस्कार सिखाता है सूर्य की तरह तपाता है आगे बढ़ने की प्रेरणा देता है-राजा रणवीर सिंह जब छोटे से थे पिता के साथ जौहरी की दुकान पर गये। पिता जी कुछ खरीददारी में मग्न थे तो रणवीर सिंह ने एक हीरे का छोटा-सा टुकड़ा हीरा उठा लिया। बाप ने कहा छोड़ो उसे तुम छोटे से हीरे के काबिल नहीं हो। तुम्हारी पगड़ी पर कोहेनूर सजना चाहिए। माँ-बाप घर का माहौल ऐसा बनायें कि बच्चों में अच्छे संस्कार आ सके। परिवार में एक समझदार मुखिया की जरूरत होती है एक कुंआ हो गांव में तो पूरा गांव हरा भरा हो जायेगा। एकता में सारे एक हो जायें। एकत्व वहां ही होता है यहां सिर एक, हाथ अनेक। माँ दुर्गा का सिर एक है शक्तियां (हाथ) अनेक हैं। रविन्द्र नाथ की कविता के कुछ भाव यूं हैं-

अस्त होते समय सूर्य ने कहा
क्या कोई है? जो मेरे अस्त
होने के पश्चात् कोई मेरा
कार्य पूरा करेगा
झट से माटी का दीया
सिर उठा कर बोला,
मैं यत्न करूँगा

कोई एक हो परिवार में, जो दीन हीन न होने दें किसी को। माँ-बाप बच्चों की प्रेरणा बने। जीजा बाई अपने पति के साथ नहीं पुत्र के साथ रही। उसके पति ने कहा, इसे मेरे साथ भेजो। जीजा बाई ने कहा-मैं अपने पुत्र को सिर झुका कर नहीं सिर उठा कर चलते देखना चाहती हूँ। यह थी भारत की

माएं। माता-पिता अपनी धन दौलत का वारिस तो बनाते हैं पर खानदान की, परम्पराओं का अपना उत्तराधिकारी भी बनना सिखाऐं उत्तराधिकारी यानि आपके 'उत्तर' जो कार्य आप से अधूरे रह जायें उनके वो उत्तर बने। खाली पगड़ी बांधने से रसम नहीं होती। अपने माँ-बाप खानदान अपने पित्तरों का उद्धार भी आपने करने हैं विरासत की परम्पराओं की पगड़ी होती है सिर पर जो मंत्रों से बांधी जाती है। घर का वातावरण बच्चों को बहुत कुछ सिखाता है तभी बच्चे संस्कारी नेक बनते हैं। लेकिन जब आप दोनों एक होंगे तो जितना आपस में मेल होगा उतना ही माल भी होगा। कर्मों को कुशलपूर्वक करो ताकि आपके कर्म हस्ताक्षर बन जायें।

बच्चों को संस्कार सिखायें कब? जब वो 7-8 वर्ष का हो तब। हमारी संस्कृति में 8 का और 60 का पढ़ने जाता है। 8 का स्कूल में पढ़ने जाता था और 60 का जंगलों में बानप्रस्थ में बच्चों को 7-8 वर्ष से ही संस्कार सिखाये जाते हैं-जैसे नर्सरी में पौधे यानि पनीरी बनानी पड़ती है। पौधे लगाने की उमर होती है-बंगाल के एक गरीब घर की घटना है उस घर का एक लड़का था 'विद्यासागर' बहुत गरीब था। जब वो छोटा था तो उसकी दादी बीमार थी। पोता भी साथ में बैठा था, उसके पास। उसने दादी से कहा, दादी अच्छी अच्छी बातें सुनाओ न। दादी ने कहा, जब भी मौका मिले काम करने का, तो आगे बढ़ कर पहले करना किसी जरूरतमंद की जरूरत पूरी कर सको, तो करना। सब लोग काम करते हैं पर तुम अलग से, हट के, काम पूरा करना। फिर दादी ने उसे एक सेब दिया और कहा कि खाओ इसे। 'विद्यासागर' ने उस सेब को हाथ में लेकर उसे देखा, फिर सूंघा और फिर कान से लगाया जैसे कुछ सुन रहा हो फिर उसने खाया। उसे दादी ने कहा-तू सब कुछ सीख गया है। सर्दियों के दिन थे गरीबी के कारण गर्म कपड़े भी नहीं थे।

उसके बाप ने उसको एक कोट सिलवा दिया। वो बहुत खुश था। अब वो स्कूल में कोट पहिन कर जाने लगा। एक दिन वो स्कूल में जा रहा

था कि उसने देखा पुल के नीचे एक औरत अपने नन्हें से बच्चे को अपने सीने से लगाये ठिठुर रही थी। विद्यासागर नीचे उसके पास गया उसने सर्दी से कांपते हुये बच्चे को देखा तो अपना कोट उतार कर उस औरत के बच्चे के ऊपर दे दिया। वो औरत बोली कुछ भी नहीं पर टकटकी लगा कर देखती रही। मानो बहुत कुछ दे दिया हो विद्यासागर कोट दे कर स्कूल चला गया। शाम को जब घर पहुँचा तो माँ ने पूछा, कोट कहां गया? वो चुप रहा। माँ ने बहुत डाँटा पिता ने डाँट के साथ-साथ 2 चार थप्पड़ भी जड़ दिये, और कहा, कहाँ से लाऊँगा अब दूसरा कोट? विद्यासागर पिटता रहा पर बोला कुछ नहीं। तभी माँ ने उसकी बाजू पकड़ कर उसे दूसरे कमरे में ले गई और बोली, कितनी डाँट खाई मार खाई, तुम्हें दर्द नहीं हुआ। विद्यासागर ने माँ को सारी बात सुनाई और कहा, माँ बच्चा ठंड से ठिठुर रहा था और उसकी माँ उसे अपने साथ चिपकाये हुऐ वो भी ठिठुर रही थी-उसके दर्द के सामने मेरा दर्द कुछ भी न था। माँ ने उसकी बात सुन कर जोर से अपने गले लगा लिया और कहा, कि इतनी संवेदना कहां से लाया रे तूं। कहां से आ गया है तूं मेरे छोटे से आंगन में। तूं बड़ा होकर बहुत बड़ा आदमी बनेगा-यह संस्कार माँ-बाप से मिलते हैं। इसी तरह 'मुंशी प्रेमचंद' की कहानी याद आती है जिसमें एक माँ अपने बच्चे को मेला देखने जाते समय कुछ पैसे देती है, और कहती है कि वो वहां कुछ मिठाई खा ले। बच्चा पूरा मेला देखने के बाद एक जगह एक चिमटा देखता है तो उन पैसों से वो चिमटा माँ के लिए खरीद लाया-माँ ने कहा अरे बेटा तुझे पैसे दिये थे दोस्तों के साथ मिठाई खा लेता। बेटा बोला माँ मिठाई तो कभी भी खा सकता हूँ और फिर थोड़ी देर के लिए खा कर खुश भी हो जाता। लेकिन माँ जब तू रोटी सेंकती है तो तेरा हाथ जल जाता है, मुझे बहुत दुख होता है। कैसे कैसे संस्कारी बच्चे हुये हैं। आजकल हमने अपने बच्चों को कितना सुखद बना दिया है बच्चों को शिक्षा ही नहीं दीक्षा भी दीजिए। घर गृहस्थी सबसे बड़ा आश्रम है। तभी घर को गृहस्थ-आश्रम कहते हैं। यहां संस्कारों परम्पराओं की शिक्षा दीक्षा दी जाती है। यहां संत

पैदा होते हैं गृहस्थी से ही संन्यासी निकलता है, बनता है। ज्ञानवान उच्चकोटी की यहां सन्तानें पैदा की है औरतों ने। ''मदालसा'' जैसी औरत जो रूपवती ही नहीं थी उच्च कोटि के विचारों से भी महान थी उसके रूप की बहुत चर्चा थी। शुद्ध और पवित्र विचार व्यक्ति के सौंदर्य में चार चांद लगाते हैं। राजा चक्रवर्ती उस पर मोहित हो गया और उसने शादी का प्रस्ताव रखा और शादी कर ली। ''मदालसा'' ने राजा को कहा कि मेरी कोख से अज्ञानी सन्तानें पैदी नहीं होंगी-मेरे बच्चे ब्रह्मज्ञानी होंगे-आप मेरा साथ देंगे ? राजा ने कहा मैं पूरा सहयोग दूंगा। जब मदालसा को पहला बच्चा पैदा हुआ तो वो रोने लगा तो माँ ने चुप कराते समय लोरियां सुनाते उसके कान में कहती, तूं ब्रह्म है। संन्यासी है, चेतन है। अजर-अमर अवनाशी ईश्वर है। इस तरह के मंत्र बच्चे के कान में फूंकती थी। सात बच्चे पैदा हुये सात ही संन्यासी हो गये। जब आठवां बच्चा गर्भ में आया तो राजा रोने लगा कि तुमसे प्रार्थना करता हूँ इस बच्चे के कान में वो मंत्र मत फूंकना एक को तो रहने दो जो मेरा राजपाट मेरा युवराज पद संभालें। जब आठवां बच्चा पैदा हुआ तो राजा सारी मर्यादाएं छोड़कर उसके पास आ गया कि कहीं मंत्र न डाल दें उसके कान में मदालसा मान गई। वह अपने बच्चे को केवल इतनी ही कह पाई ''बुद्धों सी शुद्धों सी'' और वो बेटा बड़ा होकर राजपाट घर बाहर संभालें संन्यासी हो गया। नैतिक शिक्षा संस्कार यह सब सम्वेदना घर से माँ से मिलती हैं। किस्से कहानियाँ उच्च कोटि के लोगों की ही बनती हैं, सुनी जाती है। सुनाई जाती है। जिनमें त्याग की भावना हो। आज तक किसी गुण्डे मवाली की समाधि नहीं बनती देखी। उन्हीं लोगों की बनती है जिनमें त्याग होता है।

''नीति से कमाओ
रीति से समाज में रहो
प्रीति से भगवान् का
भजन करो-

पति पत्नी की बात सुनें, पत्नी पति की बात सुनें, बुद्धि शुद्ध हो धैर्य धीरज से जिंदगी चले मस्त हाथी की चाल से तूफान भी आयें जिंदगी में, तो हिमालय की तरह अड़िग रहे। बड़े से बड़ा तूफान भी गुजर जायेगा। आंगन में खुशियां हो त्याहारों जैसी हो।

मुस्कराहट होंठों से जाये न
आंसू कभी आंखों में आयें न
दुआ है, आपका हर ख्वाव पूरा हो
ख्वाब जो पूरा न हो ऐसा ख्वाब कभी आये न।

त्यौहार बनते हैं मनाये जाते हैं औरतों से। पुरुष केवल साहसी होता है औरत दुसाहसी होती है। क्योंकि सारी उमर रसोई में अग्नि के पास रहती है भीतर कितने भी भूकंप हों लेकिन फिर भी जीती है कभी रोकर कभी मुस्कराकर जीती है। कभी गाकर-मैं सोचती हूँ काश उसे पंख लग जायें तो वो आकाश को भी नाप सकती है। सारे दुख सुख उसकी कोख में पलते हैं।

तभी परिवार सुखमय होता है। एक बार राजा 'टोडरमल' ने अपने मंत्री से कहा कि सबसे कठिन है परिवार को एक जुट करना, बांधना, परिवार का जुड़ना बहुत बड़ा गुण है। 'टोडरमल' ने कहा हमारे यहां सभी बिखरे-बिखरे से हैं। आपके परिवार के बहुत चर्चे सुने है। आप के घर में 80 लोग एक जुट होकर कैसे रहते हैं। मंत्री ने कहा महाराज-यदि आप चाहें तो यह राज मेरी दादी से जानें, पूछें इसका रहस्य। राजा मंत्री की दादी के पास गया-उसने पूछा, माँ इतने बड़े कुटुम्ब को कैसे संभाले हुये हो-मैं जानना चाहता हूँ-उसे कहा, बेटा भगवान् ने कान दो दिये हैं और मुँह एक। हमारे यहां सब सुनने वाले हैं, सुनते हैं, सुनाते नहीं हैं। सब में बरदाश्त करने की शक्ति है। इसलिए हम सब इकट्ठे हैं घर का माहौल ठीक रखती हैं, औरतें। स्वार्थ से ऊपर रिश्तों में त्याग की भावना और दूसरों को श्रेय देती हैं। जीभ पर नियंत्रण हो-तभी घर टिकता है।

सास बोलती है जब, तो एक वचन होता है
ननद बोलती है जब, तो द्विवचन हो जाता है
और जब बहु बोलती है तो बहुवचन हो जाता है

बेटा रस्सी देखी है सूत की-उसको बट्टा जाता है। बट्ट-बट्ट के उसको मजबूत बनाया जाता है। इसी से रिश्तों को बांधा जाता है। इसी रस्सी से बाल्टी को बांध कर कुयें में उतारा जाता है और यह रस्सी बाल्टी को कभी खाली नहीं रखती पानी से भर के लाती है। कुआं भी कहता है और उलीचो पानी और अपने रूखे सूखे रिश्तों के गले तर कर दो-त्याग की रस्सी-जिस दिन आप का घर खुशहाल होगा उस दिन आपका घर तीर्थ बन जायेगा-तीर्थों पर जाना नहीं पड़ेगा। आपके घर का माहौल मंदिर जैसा लगना चाहिए। गृहस्थी में रहकर कुल धर्म का पालन करने वाली औरतें ही घर को मंदिर तीर्थ बना देती है-मर्यादों में नदियां बहती है समुद्र भी मर्यादा में रहता है-

आज हर घर आंगन में कृष्ण कन्हैया नन्हा गोपाल है। राम महावीर बुद्ध शिव कोई भी बाल रूप में नहीं खेलें आंगन में। कृष्ण इस रूप में प्रिय रहे रूला कर हंसाना जीवन की झांकी है। राम ने ज्ञान को जी कर दुनियां के सामने मयादाओं को रखा कृष्ण ने समाज सुधार कैसे करना चाहिए? मित्रता, राजनीति, कूटनीति, अन्तर्राष्ट्रीयनीति सब कृष्ण ने बताया। प्रेम को महत्व दिया-जीवन सुख ही नहीं आनन्द है। जो हमारा मूल है, सरूप है आनन्दमय है-अरे मोर के पास कोई मकान दुकान नहीं है फिर भी मस्त है-सो जीवन को उत्सव बनाओ-कृष्ण के पास केवल बांस का टुकड़ा है जो भीतर से खाली है पर संगीत से भरपूर है।

हजारों हजारों दीपक इन्तजार करते हैं
किसी एक जले हुए दीपक का कि
कब वो आये और हमें जलाए कि हम
सब एकाकार हो कर जगमग करें-आपके आंगन में

जब तक आपको संग न मिले आप बिन जले दीपक की तरह हैं बेजान है। हम सबके पास ज्ञान की 'पास बुक' होनी चाहिए। अच्छे विचारों की डायरी अच्छे ग्रंथ की बातें हो उसमें। अच्छी-अच्छी चीजों की Collections हो अपनी प्रयोगशाला हो, अच्छे विचारों के पौधे लगायें फिर उन्हें Transplant करें दूसरों के-हृदय में।

कमाओ इतना कि जो
तिजोरी में जाये
और कमाओ इतना कि
जो साथ भी जाये।

ooo

भारत की संस्कृति

दुनिया में देश अनेक हैं
पर भारत एक हैं
नदियां अनेक हैं, पर
गंगा एक है।
पर्वत अनेक हैं पर
हिमालय एक है।
ग्रंथ अनेक हैं
पर गीता एक है।

यहां सूर्य अपनी सम्पूर्ण ऊर्जा देता है। अपनी तपश से फसलें फल पकाता है तो चाँद अपनी चाँदनी से उनमें रस भरता है। यहाँ ऋतुओं में परिवर्तन होता है, इसलिए यहां पंचाग बनता है पूर्णिमा एकादशी पंचाग से ही देखी जाती हैं। यहां भागीरथ जैसे युवक हुये जिसने गंगा को स्वर्ग से उतारा। यहां आकाश पर गैरिक रंग फैलता है। बुद्ध, महावीर कृष्ण, राम, नगार्जुन शंकर, नानक, कबीर, रामानुज, बल्लभ, दादू और गोरां कुम्हार कई महापुरुषों की धारायें हैं– गुरु गंगा, गायत्री और गौ माता यह है भारत की संस्कृति–

बिना गाय गति नहीं
बिना गीता मति नहीं

हिन्दुस्तान की सारी अच्छाईयों संस्कारों के पीछे गुरू होता है। ह्यूनसांग मैगस्थनीज भारत आया तो उसने यही कहा कि मैंने भारत में एक जगह सोने की छड़ी लगाई जमीन पर गाड़ दी। तीन महीने वो लगी रही। किसी ने छुआ

तक नहीं उसने लोगों से पूछा तो उन्होंने कहा-यह हमारी नहीं है। न ही हमारी मेहनत लगी है इसमें। इस अधर्म को हम घर पर नहीं रख सकते यह धर्म के विरुद्ध है। ह्यूनसांग लिखता है यहां 60% लोग हैं जो गोलियां खा कर सो जाते हैं। क्या वह तरक्की कर रहे हैं। पर भारत में लोग चैन की नींद सोते हैं। यहां घरों में old age home नहीं है। अभी भी डर के मारे भगवान से खौफ खाते हैं या अपने बड़े बड़ोरों के डर (इज्जत) से अपने बूढ़ों को इज्जत देते हैं घर में ही रखते हैं। यहां जब कोई दान दे रहा होता है तो देव पितर खुश हो कर उनको वरदान देते हैं। यहां अर्पण तर्पण और समर्पण की भावना है। भगवान् को अर्पण किया जाता है अपने पितरों तो तर्पण किया जाता है-तिल, जौ, चावलों को मंत्रों से तरंगें उछाल मारती हैं और पितरों को अन्न पहुँचाये जाता है। यह तरंगें T.B. Mob. की तरह जैसे रिमोट को हाथ से दबाते हैं तरंगों से Channel लगा लेते है। तरंगें ही तो हैं जो हमें मंत्रों के जरिए सिद्धियां प्राप्त होती हैं। हमारे देवी देवताओं के शरीर नहीं है। यह सब अशरीरी हैं, लेकिन मंत्रों की शक्ति से प्रगट होते हैं भारत की संस्कृति में प्राचीन ज्ञान हैं वो है वेद।

कथाओं को वेदों को पढ़ा नहीं जाता इनको सुना जाता है। इनका रस पीया जाता है। उपदेश ग्रहण करने के लिए नहीं होते सुनने के लिए होते हैं भागवत को ज्ञान यज्ञ कहा गया है। अपने आनन्द के लिए जीओ। हमारा ऋग्वेद 32 हजार वर्ष पुराना है तो गीता कितनी पुरानी है। कृष्ण काल 32 हजार वर्ष पुराने हैं तो राम कितने पुराने हैं। अद्भुत हैं गीता को वेद व्यास जी ने सम्भाल के रखा है। यह खो गई थी हिन्दू संस्कृति जीवित संस्कृति है। जितनी आवश्यकता गीता पढ़ने की आज है। इतनी कभी पहले नहीं थी यहां समुद्र के 7 कि.मी. द्वारकापुरी नगरी है। उस समय रसायन शास्त्र के (वैपिन) हथियार तैयार होते थे। इस गीता को समझ सको तो फिर इस ज्ञान को जीवन में ला सकें-अपने मन को विश्लेषण करके संकल्प लें। भारत के ऋषियों की प्रयोगशाला जंगलों में होती थी। वो अक्सर तप करने के लिए गुफाओं जंगलों

में ही रहते थे। वहां उन्होंने सूर्य, चंद्र और पवन प्रकृति को ध्यान में रखकर 'यान' (जहाज) बनाये।

एक बार डॉ. राधाकृष्णन् जी को विदेश में किसी ने जहाज दिखाये कि हमारे देश ने बनाये हैं राधाकृष्णन् जी बोले ऐसे जहाज भारत के ऋषियों ने जंगलों में रह कर गुफाओं में रह कर पर्यावरण को ध्यान में रखकर विमान बनाये पुष्पक विमान और भी कई तरह के यान बनाये वनस्पतियों पर शोध करके औषधियां बनाते थे-शल्य क्रिया अद्‌भुत थी।

भारत की संस्कृति भोग की नहीं योग और उपभोग की संस्कृति हैं सबसे बड़ी संस्कृति है अपने को ठीक करना आत्मानुसंधान। आत्मा के प्रतिकूल जो हमें अच्छा नहीं लगता वह दूसरों के लिए न करें। ऐसी सोच है भारत की अन्य की सिद्धी परोपकार नाम ही सिद्धी में भारत की संस्कृति है-यहां त्याग की संस्कृति है न कि योग वाली संस्कृति दूसरों का छीन कर ले जाना नहीं है। अपना देकर उसे देखते हुये खुश होना। यह रामायण की संस्कृति है-थाईलैंड में कोई व्यक्ति अपने नाम के आगे (राम) नहीं लगाता वो कहते हैं कि राम साधारण व्यक्ति नहीं थे। कवौड़िया अफगानी वीर नदी के किनारे तक त्याग वाली संस्कृति थी। 'राम' ने 'बाली' को मार कर राज्य जीता, राज्य उसके बेटे को दे दिया। लंका को जीता तो राज्य 'विभीष्ण' को दे दिया।

अपनों को पराया बना लेना
रावण का काम था
पराये को अपना बना लेना
राम का काम था-

जब आप ऊँचे स्थान पर बैठे होते हैं तो कान का कच्चा नहीं होना चाहिए। बड़े आराम से आवेश तावेश में आकर निर्णय मत लेना। रावण ने बिना सोचे समझे सूर्पनखा की बात सुन ली। दुश्मनी मोल ले ली और अपनों का नाश किया। दूसरी और राम मर्यादा पुरुषोत्तम सीधे सादे थे। जब भरत राम के साथ

खेलते थे तो अक्सर हार जाते थे। भरत पूछता है, भैय्या आप जानबूझ कर हार कर मुझे जिताते हैं। राम कहते तुम्हारी जीत में मुझे प्रसन्नता मिलती है। कैसे थे भाई-राम बनवास में थे तो उनके लेने गये भरत, पर राम नहीं माने वापिस अयोध्या जाने को भरत के न मानने पर उन्होंने अपनी खड़ाऊ (पादुकायें) दे दी। भरत बहुत खुश हुये। लोगों ने पूछा-आप खड़ाऊ को बहुत प्रसन्नता से क्या देख रहे हैं । भरत ने कहा-एक पांव खड़ाऊ का राम है, दूसरा जानकी का-यह दोनों पादुकायें मुझे संभालें रखेगी-''खड़ाऊ''-आधार मिल गया मुझे पादुका मिल गई है। पादुका कभी किसी के पास नहीं आती। चरणों को ही पादुका तक आना पड़ता है। हाँ-कोई चलाने वाला मिल जायें तो चल पड़ती हैं। पादुका की आँख नहीं होती। पादुका के पास जब चरण आते हैं तो वो कहती है। मैं आपकी नहीं हूँ। फिर भी कोई न कोई पहन लेता है अनजाने में-

बिन आखन पायनी
फिर भी जानी पहचानी
जाती हूँ।

ऐसे थे राम के भाई भरत-सीता धैर्य और त्याग की मूर्ति थी। राजा जनक जब बन में राम को मिलने गये तो अपनी बेटी सीता को तपस्वी भेष में देखा तो- बड़े प्यार से बोले-

तापस वेष जनक सिय देखी
भयउ प्रेमू परितोषू विशेषी
पुरी पवित्र किए कुल दौऊ
सुजस सबल जगु कह
सब कोऊ
जिति सुरसरि कीरती सरि तेरी
गवनू कीनह विधि अंड करोरी
गंग अवनि थल तीनी बड़ेरे
एहि कीए साधू समाज घनेरे

अर्थ है विदेही पुत्री, तेरी कीर्ती रूपी देव नदी गंगा जी भी जीत कर जो एक ही ब्रह्मांड में बहती है। करोड़ों ब्रह्माण्डों में चली जाती है। गंगा जी ने तो पृथ्वी पर तीन स्थानों को हरिद्वार, प्रयागराज और गंगासागर में मिल कर सागर को गंगासागर नाम दे दिया। बड़ा तीर्थ बनाया। पर जानकी तेरी इस कीर्ति नदी ने तो अनेकों संत समाज रूपी तीर्थ स्थान बना दिए हैं। तेरे यश से सारा जगत उज्जवल हो गया है।

ऐसा कहे सब कोई

हमारा मूल नारायण है। नीर से नारायण उन्हें नीर वाली चाहिए थी वो नीरजा कहलाई राम बड़ा चरित्र पैदा करता है उसे भूमिजा चाहिए थी। जो भूमि से उत्पन्न हुई भूमिजा सीता कहलाई। शिव चट्टानों पर बैठते हैं। उसे शैलजा चाहिए-वो हिमपुत्री पार्वती कहलाई। ऐसी ऐसी स्त्रियां पैदा हुई-जैसे मरियम उसके चेहरे जैसा ज्यादा पवित्र चेहरा कहां ढूंढ पायेंगे-वो स्त्रियां स्वर्ग का द्वार ही थीं।

यहां देवता पैदा होने को तड़पे हैं। कौशल्या ने तप किया। प्रार्थना की कि मेरे घर जब भी संतान पैदा हो, भगवान् ही पैदा हों। कौशल्या की साधना तप से भगवान् को पैदा होने के लिए मजबूर कर दिया। पैदा होने से पहले भगवान ने चतुर्भुज रूप में प्रगट हुये कौशल्या को दर्शन दिये परन्तु कौशल्या ने कहा, हे प्रभु-भगवान बन कर नहीं, शिशु बन कर मानव रूप में आओ, ताकि आपको भी पता चलें कि मानव कितना सुख दुख भोगते है संसार में आकर एक मिसाल बनिए-

भए भगट कृपाला दीन दयाला, कौशल्या हितकारी
हरषित महतारी, मुनि मन हारी अद्भुत रूप अनूपा
लोचन अभिरामा तनु धन श्यामा, निज आयुध भुजकारी
भूषन बन माला, नयन विशाला, शोभा सिंधू खरारी
माता पुनि बोली सो मति डोली तजहूं तात यह रूपा
कीजे सिसू लीला अति प्रिय सीला यह सुख परम अनूपा

माँ कौशल्या की प्रार्थना सुनकर भगवान् ने शिशु (बालक) का रूप धारण करके क्रंदन करने (रोने) लगे। अजब बात है। कौशल्या ने साक्षात् भगवान के दर्शन किये और दशरथ जो अपनी भक्ति से दस इन्द्रियों को जिन्होंने अपने वश में करके रखा था। जो एक छलांग धरा (पृथ्वी) से लगा कर स्वर्ग का चक्कर लगा लेते थे पर भगवान् का केवल नाम ही वो सुन सके कि बेटा हुआ है। श्रवण किया पर दर्शन कौशल्या ही कर पाई। कितनी सामर्थ्य थी उसमें, जिसने भगवान् को भी मजबूर कर दिया इन्सान बन कर धरती पर उतरने के लिए। 'देवकी' ने भी तप किया। तप यशोदा ने भी किया। पर देवकी ने कहा कि मैं भगवान को पैदा करूँगी। परन्तु यशोदा ने अपने तप का यश दूसरों को दिया अपने नाम को सार्थक किया-यश-ओ-दा। उसमें अहं नहीं आया जब कृष्ण पैदा हुये तो चुतुर्भुज के रूप में वासुदेव को दर्शन दिये देवकी न दर्शन कर सकी न ही कृष्ण को छू सकी-सब कुछ वासुदेव के हाथों में ही हुआ टोकरी में रखा, ले गये देवकी बेहोश पड़ी थी-वो नंद गांव गोकुल में ले गये देवकी एक झलक भी नहीं देख पाई। परन्तु यशोदा ने कान्हा का बचपन देखा ऐसी-ऐसी अनोखी क्रीड़ायें देखीं : मुँह खोल कर पूरे ब्रह्मांड के दर्शन करवाये। यहां अनसूईया जैसी औरतें हुई जिन्होंने मर्यादाओं को तोड़ने वाले देवताओं को भी नहीं बक्शा उन्हें भी बच्चे बनने को मजबूर कर दिया-रामायण के लंका काण्ड में लक्ष्मण की पत्नी का ज़िक्र आता है कि युद्ध में रावण का बेटे मेघनाथ का जब लक्ष्मण ने वध किया तो मेघनाथ की पत्नी कहती है कि मेरे पति को कोई नहीं मार सकता था। सो मैं उसे देखना चाहती हूँ कौन है? वह यौद्धा (जब रणभूमि में गई लक्ष्मण को देखा तो बोली तुमने नहीं मारा मेरे पति को। वो जो 14 बरसों से तप कर रही अयोध्या में तपस्वनि-तुम्हारी पत्नी का तप है-यह उसका बल है। महाभारत में अभिमन्यु की पत्नी 'उत्तरा' वीरागंना का जिक्र आता है-अभिमन्यु की मृत्यु के बाद अर्जुन टूट चुका था। अपना धनुष (गांड़िव) छोड़ कर गम में डूब गया था तो उस समय वीरागंना अभिमन्यु की पत्नी 'उत्तरा' ने अभिमन्यु का धनुष उठाया और अर्जुन के हाथों में दिया कि अपना कर्त्तव्य पूरा करो। लगाव तो मोह पैदा करेगा। ऐसी ऐसी

औरतें हुई हमारे भारत में जो भारत की संस्कृति को दर्शाती है। हमारी संस्कृति सनातन है हम इस धरा को भूमि नहीं माता कहते हैं। किसी भी देश के साथ माता नाम नहीं लगता जुड़ता। सिर्फ भारत को ही भारत माता का दर्जा दिया जाता है। इसका जो आवरण है धरती का वह अपनी अस्मिता का स्वाभाविक आर्कषण है जो जिससे ढकी रखती है वह है समुद्र को अपने चारों ओर लपेटती है। उसमें अम्बा के अंश हैं। पहाड़ उसके स्तन हैं। हिन्दू संस्कृति ही उसका विशाल व्यक्तित्व है-हे मनुष्य तुम देवता नहीं मनुष्य बने रहो और पूरे विश्व में मनुजता को लायें। ब्रह्म को अपने अंदर झांक देख अपने स्वरूप को देखें कि तूं ईश्वर हो सकता है। ऋग्वेद सबसे पुराना ग्रंथ है वे दर्शाता है कि हे मानव तू सांसों का सिलसिला नहीं है गति, मति निर्माता है अपने आपका रचिता है। अपना उत्पादन है। कैसे कैसे संत पैदा हुए है यहां-कबीर, गोरा कुम्हार मिट्टी को रौंदता घड़े बनाते बनाते ही प्रभु को पा गया। 'तुलाधर' वैश्य तराजू पर तौलता रहा, ब्रह्मज्ञान को उपलब्ध हो गया कबीर जुलाहे थे शिष्य कहते कि हमें बड़ी पीड़ा होती है कि हमारे गुरु कपड़ा बुनते हैं। कबीर कहते हैं कि मैं न बनाऊँगा तो इतने सुंदर कपड़े कौन बनायेगा? झीनी झीनी बीनी चदरिया। गीत गाते चादर बुनते। चादर ही नहीं बुनते, चादर में रामरस बुनते और ज्ञान को उपलब्ध हो गये। माली ''श्री धामा'' हुये जो माली का काम करते थे। फूलों को चुन चुन कर माला बना कर 'कृष्ण' को पहना देते थे। कभी फूलों का गजरा कभी फूलों की पायल बना कर पहना देते थे। भगवान कृष्ण के सिर पर मुकट पर मोरपंख माली धामा ने ही सजाया था उनके सिर पर श्री धामा माली के प्रेम का मूल्य क्या है?

अंत में कृष्ण जब गुजरात में आये तो द्वारकाधीश हो गये-'वृंदावन में माखन चोर, कान्हा, ग्वाला कहलाये। पर जब द्वारका नगरी में आये तो महाराजा कहलाये। पगड़ी बांध ली। द्वारका में शेष अन्य लोगों ने भी पगड़ियां बांध ली। समय के साथ साथ परिवेश भी बदल जाते हैं। द्वारका में कृष्ण 160 बरस रहे। किस किस स्थान पर उनके चरण पड़े धन्य हैं वह सागर जिसमें

कृष्ण ने डूबकियां लगाई। इसे द्वारकापुरी कहते हैं यानि-मन का द्वार से गुजर कर मन एकाकार हो जाता हैं। वह द्वारकापुरी हो जाती है। द्वारका कर्म के क्षेत्र की भूमि है। वृदावन लीला भूमि है। यहां जब रहे। वहां बाल गोपाल, प्रेमी स्वामी, पिता राज भी हैं। दाऊ के छोटे भाई भी हैं सब कुछ, रिश्ते रख के, ब्रह्म भी हैं, अकर्त्ता नारायण है। सचिदानंदन भी है-

भारत के चरित्र का नाम है। 'राम'-राम को आनंद कहा गया है। यहां की सुबह राम राम से शुरू होती है। काशी में मरने के समय कान में जो मंत्र शब्द डाले जाते हैं। वह हैं राम राम। भारत की खास वाणी में राम हैं। राम हमारे प्राण है। हमारा जीवन है। अयोध्या से राम गये तो अयोध्या प्राण हीन हो गई। भारत की संस्कृति यहां गैरिक रंग आसमान में सुबह शाम आकाश में फैलता है। संन्यासियों का रंग है गैरिक, संन्यास-यानि रंग गये अब तुम पागलपन में-गैरिक के वस्त्र हैं मस्तों के वस्त्र। संन्यासियों का रंग कि मैंने अपना रंग छोड़ दिया है। गुरू जो रंग पकड़ा दे पकड़ा। यह तो प्रतीक है-गैरिक प्रतीक है अब गुरु जो रंग देगा उसी रंग मैं रहुँगा-आत्मा को रंगना है।

ooo

बहिरंग (अनरंग)

परमात्मा मौजूद है अनेक अनेक रंगों में, अनेक अनेक रूपों में। लेकिन हम सारे जगत को एक ही रंग में क्यों रंग देना चाहते हैं। अगर सारे फूल एक ही रंग के होते तो यह जगत इतना सुंदर होता। अगर सारे गायक एक ही गीत को गाते तो हम उब नहीं जाते। अगर सारे साजों में एक ही स्वर उठता गूंजता। अगर सारे वृक्ष कोई इस ढंग का कोई उस ढंग का, कोई छोटा कोई बड़ा। किसी पर छोटे-2 सफेद फूल किसी पर नीले पीले फूल। कितनी हरियालियां हैं। कितने पक्षी हैं और उनके कंठगान है उन्हीं सब में सौंदर्य है। वैविध में ही संपदा है जरा सोचो एक जैसे लोग होते एक जैसे फल फूल पक्षी तो जीवन कितना द्ररिद्र हो जाता।

इसी तरह जड़ चेतन सब में परमात्मा मौजूद है-देखने वाली आंख चाहिए और देखने वाली आंख यदा से उत्पन्न होती है। समर्पण से उत्पन्न होती है इधर हम मिटते हैं, उधर परमात्मा के करीब पहुँचने लगते हैं। जितने मिटोगे उतने उसके पास हो जाओगे। जितने तुम दूर रहोगे, उतना ही दूर परमात्मा रहेगा। परमात्मा तरलता से मिलता है, बिखरो, पिघलो, मिटो। हमारे यहां कितने अवतार हुये हैं। और जितने अवतार पहचाने गये हैं, उन सब में ऐसा ही है। बहुत से अवतार पहचाने नहीं गये हैं। जो पहचाने गये उनको विभूति जाना। जो पहचाने गये जो प्रसिद्ध हो गये। जिनके अंतरंग में कुछ लोग उतर आये और उनके अंदर (परम आकाश घटा है) महाबीर, बुद्ध, नानक, जीयसस मुहम्मद मूसा-उनके भीतर आसमान से कुछ किरणों झरी और उनको उन्होंने पिया, जैसे कोई जल पीता है प्यासा। इन लोगों के अंदर महाआकाश घटा और वो उसके निकट हो गये और उनकी वाणी से उपदेश निकले। उपदेश

का अर्थ है-'महादेश' प्रगट हुआ और वो भागीदार हो गये। एक बात याद रखने वाली है अगर यह लोग न बोले होते तो उपनिषद न होते, गीता न होती, बाइवल कुरान न होता उनकी वाणी न झरी होती तो आज हम जंगलों में होते और जो उपदेश उनसे बोले गये वो भी हमने ऊपर ऊपर से सुने वो हमें अनजाने में लें आयें, काश सुन लिए होते तो स्वर्ग में होते। उपदेश पूरे ही नहीं सुने फिर भी हम जंगलों से पशुओं के बहुत पार आ गये हैं। अगर सुन कर अनुभव किये होते तो परमात्मा में प्रविष्ट हो गये होते। इन अवतारों में वाणी भरी जैसे सूरज की किरणें रौशनी भरती है। जैसे फूल से गंध भरती है। अब फूल कैसे रोके अपनी गंध सुवास को। जब भीतर दीया जल गया तो उसकी रौशनी झरेगी, बाहर प्रकाश फैलेगा ही-कभी उन महापुरुषों की चुप्पी से कभी शब्दों से बोलेंगी जरूर। महावीर के अंदर जो कुछ घटा उन्होंने कहा मैं चंद बातें समझाता हूँ। उपदेश देता हूँ, पर आदेश नहीं देता आदेश का अर्थ है-ऐसा करो। लेकिन उपदेश का अर्थ होता है जो मुझ में घटा-उसी को बांट रहा हूँ, लेना है तो लो नहीं तो फैंक दो। काम आयें तो ठीक, नहीं तो भूल जाना। जैसे पक्षी गीत गाते हैं सुनना तो सुनों, नहीं सुनना चाहते तो मत सुनो। फूल खिले हैं। तुम्हें देखने हैं तो देखो चांद निकला है देखो चाहे न देखो उपदेश का अर्थ है शब्दों को समझने की कोशिश करो। यह संस्कृत के शब्द साधारण नहीं थे। ये भाषायें ज्ञानियों की निरझनी से झरी हैं एक एक शब्द में बड़ा अर्थ है। इनके अर्थ बड़े गूढ़ हैं और यही शब्द ज्ञानियों के अंदर से झरें है। 'उप'...ऊपर से झरना-'देश' यानि उपदेश यानि Space विस्तार और स्पेस के निकट जाना क्योंकि उसी से उपनिषद घटा-महा-आकाश-यानि स्पेस ही है तभी इन्सान के अंदर खाना खाने पचाने वाली 22 फुट की जठराग्नि आंत कैसे उसने तह करके रखी है। Space ही तो है तभी तो Injection की सूई अंदर जाती है। ऊपर वाले ने बहुत स्पेस रखा। केवल एक दिल है हमारे पास यहां हमने स्पेस नहीं रखा। खाली है-प्रेम भावनाओं से वैसे भरा पड़ा है। Who is love God - वह सूफी है।

हमारे देश में एक लाख 24 हजार संत हुये। हमारे अंदर जो छिपी हुई शक्तियों को साक्षात्कार करने के लिए एक लाख लोगों ने पद यात्रा के लिए मक्का, तुर्की, रूस में गये। कैसी शक्तियां थी उनके पास लेकिन अंदर चार लोग ही जिंदा बचे। यानि जागे हुये ही वापस आये बाकी सब सोये हुये रहे थे। इन सोये हुये लोगों के लिए उपदेश उपनिषद है। जिसके भीतर घट गया उसके पास बैठना। कराची में एक 'मशीरमाल' यानि D.C गुरु नानक जी के पास आया। उनके निकट बैठा और उसने कहा गुरु जी मैं बहुत परेशान हूँ-मेरे से काम नहीं हो रहा न ही कुछ करने को मन करता है न घर न दफ्तर कहीं भी चैन नहीं है। गुरु जी मुझे दो शब्द सुना दो कि थोड़ी राहत मिले मन को सकून मिले।

अपने रंग में रंग लो तो होली है
देख ली मैंने बहुत दिनों
तक दुनिया की रंगीनी
किंतु रही कोरी की कोरी
मेरी चादर झीनी है
तन के तार छुऐ तो बहुतों ने
मन का तार न भीगा कभी
अपने रंग में रंग लो
मुझे

सद्‌गुरु भीड़ के साथ नहीं जोड़ता भीड़ से मुक्त करता है। गुरु नानक ने उसे कहा-'अक्खियां खोल, अक्खियां खोल'।

जैसे ही उसने गुरु के मुखारबिंद से यह वचन शब्द सुने। उस आदमी के चेहरे पर नूर उतर आया-वो फिर बोले अक्खियां खोल, अक्खियां खोल

गफलत का पर्दा खोल
परदे के पीछे अजब नजारा हैं
उसको देख, उसको देख

गुरु ने कहा जब तक जिंदगी रूखी सूखी है तब तक जिंदगी मरुस्थल की तरह है जब तक प्रेम का झरना न फूटेगा इन रूखे सूखे लोगों के बीच और जब प्रेम का झरना फूटेगा तो तुम्हारे पल्लव फूटेंगे। तुम हरे भरे हो जाओगे। गुरु जी ने एक माला दिखाई और पूछा, इसमें कितने दाने है। उसने कहा 108 फिर दूसरी माला दिखाई और पूछा इसमें कितने दाने हैं? उसने कहा 100 दानें। गुरु जी ने कहा यह सूफियों की माला है। वैष्णवी माला में 108 दानें होते हैं। फिर उन्होंने कहा, मेरी माला में 50 दाने हैं। उसने पूछा 50 दाने का मतलब गुरु जी ने कहा-जा एकान्त में बैठ कर ध्यान कर प्रभु से नाता जोड़ स्वयं पता चल जायेगा-संसार से निराश नहीं होना, भागो कहीं मत। संसार में रहो बसना है फंसना नहीं। यह संसार ईश्वर का यज्ञ है और इस जगत रूपी यज्ञ की अग्नि में अपनी आहुतियां दो अर्पण की भावना लाओ खुश दिल खुश दिन बन जायेगा। दुनियां की चिंता छोड़ आत्म चिन्तन करते करते अपने जीवन का लक्ष्य सामने रख-वह जो तुम्हारे भीतर बसा है उसके निकट जाओ-उपवास करो-उपवास का अर्थ अन्न त्यागना नहीं है ऊपर वाले के निकट वास करना है शरीर को भूलने का नाम है उपवास और यह शब्द उपवास उन्हीं लोगों के लिए है जिन्हें प्यास लगी है। वहां भीड़ नहीं चाहिए उनके लिए जो सच में ही महाकाश होने चाहते हैं जो मेरे भीतर घटा है आपके अंदर भी घट सकता है और वो आदमी उठा एक उमंग उत्साह के साथ चला गया।

इन महापुरुषों के भीतर परमात्मा बोलता है और उन्होंने महसूस किया। उनके भीतर ज्ञान का दीया जला-और इस बात को भारत के ऋषियों ने जाना समझा खोजा। यह दोनों बातें उन्होंने देखी ईसाई और मुसलमान नहीं इसे बरदाशत कर सके। यहूदियों ने जीसस को इसलिए सूली दी कि उसने घोषणा कर दी कि मैं परमात्मा हूँ, अवतार हूँ। यहूदियों में अवतार की धारणा नहीं थी। कोई पैगम्बर हो सकता है, था पर अवतार नहीं। जीसस के पहले भी पैगम्बर हुये जो संदेश लाते थे। है तो मनुष्य ही न भगवान् नहीं। अवतार की धारणा भारत की संस्कृति में है। जीसस भारत में होते

तो, हम सुन लेते पचा लेते उनको सूली नहीं लगती। इस अंतर्लोक की भारत ने खोज की है और जीसस 18 वर्ष भारत में रहे, प्रमाण मिलते हैं भारत की बहुत सी बातें उन्होंने सीखी। केवल सीखी ही नहीं अनुभव में भी लाई, और अपने आप को पौंछ डाला, मिटा डाला उन्होंने। संसारी लोग हमारे पंडित पुरोहित मानते ही नहीं हैं कि कोई व्यक्ति अपने आप को परमात्मा कहे जो परमात्मा होने का दावा करे तो समझा जाता है कि यह महाअहंकारी है। लेकिन हमारे धार्मिक ग्रंथों में ऋषि परम्पराओं ने पहचाना किसी एक में नहीं हजारों में घटते उनमें देखा है। बुद्ध को पेड़ के नीचे बैठे महावीर को खड़े खड़े घटा, मीरा को नाचते घटा, गोरा कुम्हार, तुलाधर वैश्य तराजू में, नानक तेरहां तेरहां करते घटा और कबीर को चादर बुनते-बुनते घटा पर भारत में किसी को सूली पर नहीं चढ़ाया। 'मंसूर' को मुसलमान बरदाश्त नहीं कर सके। जब मंसूर ने घोषणा की ''अनहलक' यानि मैं परमात्मा हूँ। हालांकि मंसूर ठीक कह रहा था। ''मन्सूर'' के गुरु जुनैद ने कहा चुप हो जा, नहीं तो तुझे मार डालेंगे। तुम्हारे अंदर तुम नहीं वो बोलता है। पर ये मैं मानता हूँ। भीड़ नहीं मानेगी। यह अज्ञानी लोग ना समझ हैं पर मंसूर जब अपनी मस्ती में आता था (यानि) समाधि में होता तो मस्ती में बोल उठता, अनहलक। होश में आता तो गुरु से माफी माँगता कि मैं क्या करूँ मैं नहीं बोलता मेरे भीतर कोई बोलता है। मुझे कुछ भी होश नहीं रहती। जुनैद्ध ने कहा तेरा बजूद आकार देखकर तुझे कोई पहचानेगा नहीं कि तूं ब्रह्म है, परमात्मा है और वही हुआ। उसको बड़ी बेरहमी से मारा गया लाखों की भीड़ में उसके एक एक अंग को काट डाला पर उसकी मस्ती अनहलक की घोषणा वो करता गया। इसी तरह जीसस को सूली लगी। मुहम्मद 'जुनैद' व्यवहारिक आदमी थे और उन्होंने इस बात को छुपा के रखा पचा ली बात। कबीर ने कहा कि हीरा कहीं से मिल जाये तो अपने आपको पत्तों में छुपा के रखो।

हीरा मिल्यो गांठ सठियायो
वाको बार बार क्यों खोलो

यानि कि अगर हीरा मिल जाये तो चुपचाप गांठ में बांध लो छुपा लो लोग ना समझ हैं फकीर कहते हैं कि प्रार्थना भी रात के अंधेरे में करो जब कोई देखें नहीं नहीं तो लोग कहेंगे पागल हो। चुपचाप उसे अंधेरे में पुकार लेना कानों कान खबर न लगे। नहीं तो तुम्हें पागल समझ कर बरदाश्त नहीं करेंगे-लोग।

ooo

प्रेम द्वार है परमात्मा का

ईश्वर संबंधी ज्ञान विशेष का नाम भक्ति नहीं है। द्वेषी पुरुष को भी ज्ञान होता है, परन्तु उसमें प्रीती नहीं होती। ज्ञान विशेष का नाम भक्ति नहीं है ईश्वर के संबंध में जानना, ईश्वर को जानना नहीं है। ईश्वर के संबंध में जानना तो बहुत सस्ता है बिना दाव पर लगाये हो जाता है-शास्त्र पढ़ लिए जान लिया, सद्‌गुरुओं के वचन तोते की तरह कंठस्थ कर लिए, पर ज्ञान सस्ता है पंडित बनना या हो जाना बहुत सस्ता है। ज्ञानी होना बहुत कठिन है। ज्ञानी कोई ज्ञान से नहीं होता, ज्ञानी तो प्रेम से होता है। जानने के लिए ज्ञान का संग्रह पर्याप्त नहीं है। जानने के लिए प्रीति (प्रेम) जगना चाहिए। ईश्वर संबधी ज्ञान विशेष का नाम भक्ति नहीं है। उपनिषद पढ़ लिए, वेद पढ़े, गीता पढ़ी खूब जान लिया कंठस्थ कर लिए शास्त्र याद हो गये, सोचने लगे कि ईश्वर है। पर यह सब ऊपर ऊपर से है। हृदय में अंकुरित हुआ। जब तक न हुआ तब तक झूठ है। असली भक्ति व्यक्ति का परम से विवाह है। शास्त्र पढ़ने से नहीं होगा। सत्य में उतरना पड़ेगा। उतरना महंगा सौदा है अपने को खोने का। अपने को जो मिटाने को तैयार है, वही वहां जायेगा-कबीर ने कहा है; (जो घर बारै अपना, चलै हमार संग) यानि अपने हाथों से घर अपना फूंकना। पंडित कुछ नहीं फूंकता, उल्टे उसका 'मैं' और मजबूत हो जाता है। वह अपने 'मैं' कै घर को बड़ा मजबूत कर लेता है ज्ञान से खूब सजा लेता है। ज्ञान आभूषण है, अहंकार का। इसलिए ज्ञानी परमात्मा को नहीं जान पाता। प्रेमी जानता है। प्रेमी का अर्थ है-जो अपने को कुर्बान करने को तत्पर है। जो अपने को पूरा उड़ेल देगा। कुछ और चढ़ाने से काम नहीं होगा। फूल चढ़ाने से काम नहीं होगा। जब तक हम अपने प्राणों के फूल न चढ़ायें। धूपदीप से भी कुछ नहीं

होगा। मंदिरों में से भी कुछ नहीं होता। ज्ञान तो कैसे भी आदमी को हो सकता है। क्रोध से भरे हुये व्यक्ति को भी हो सकता है। दुर्वासा ऋषि तो थे मगर गजब के ऋषि थे। ज्ञान तो था ही। शास्त्रों के ज्ञाता थे लेकिन प्रेम प्रीति नहीं थी। उनके जीवन में प्रेम का बसंत नहीं आया। प्रेम के फूल नहीं खिले, क्रोध ही जलता रहा और श्राप देते रहे। कभी कभी उनको भी हो गया, जिनके पास पंडितों वाला ज्ञान नहीं था। कबीर मीरा पंडित नहीं थे। शास्त्रों का बोध भी नहीं था। कबीर ने तो कहा है-मसि कागद छूयो नहीं। 'कागज और स्याही तो कभी छुआ ही नहीं' लेकिन कबीर ने तो कहा है ढ़ाई आखर प्रेम के, पढ़े सो पंडित होये। वे जो ढाई अक्खर प्रेम के हैं, वे जरूर पढ़े। बस उन्हीं को पढ़ लिया। उन ढाई अक्षर प्रेम के पढ़ लिए तो सब पढ़ लिया। उन्हीं में सब अक्षर आ गये। प्रेम द्वार है परमात्मा का, ज्ञान नहीं। ज्ञान का अर्थ है, जीत तो न सका, जान कर रहूंगा, जीत तो नहीं हो सकी। लेकिन शास्त्र पढ़ कर तय करके जानूँगा। एक सूक्ष्म अहंकार है। जितना आदमी जानकार होगा उतना ही प्रेम कम हो जायेगा-

संत रामानुज के पास एक आदमी आया उसने कहा मुझे परमात्मा से मिला दो। 'रामानुज' ने कहा परमात्मा की बात पीछे करेंगे, पहले बताओ तुमने किसी से प्यार किया है, कभी मुहब्बत की है। उस आदमी ने कहा मैं झंझट में न पड़ा न पड़ना चाहता हूँ। मुझे सिर्फ परमात्मा से मिलना है। संत 'रामानुज' ने कहा फिर कहा तू सच सच बता दें किसी मित्र किसी लड़की-माँ भाई पिता किसी से तो प्यार होगा उसने कहा यह सब संसारी झंझट हैं इसमें मैं नहीं पड़ना चाहता। 'संत रामानुज' ने कहा, फिर मैं असहाय हूँ। क्योंकि अगर तुमने प्रेम जाना ही नहीं तो तूं भक्ति कैसे जानेगा? क्योंकि भक्ति तो प्रेम का ही विस्तार है। वह उसकी पराकाष्ठा है, प्रेमी तो छोटा मोटा पागल होता है। कम से कम जिससे वह बातें कर रहा है, वह मौजूद तो है। भक्त बिल्कुल पागल होता है इसलिए जो पागल होने का साहस रखते हैं वही भक्ति में प्रवेश कर सकते है। प्रेम तो दीवानों जुआरियों का काम है। मस्तों का काम है। समझदारी

से दुनिया चलती है। समझदारी से परमात्मा नहीं मिलता है। न-समझी से परमात्मा मिलता है। जितने दानव हो जाओगे उतनी दुनिया पा लोगे। जितने नादान रहोगे परमात्मा को पा लोग जितने निर्दोष हो जाओगे। जितने सरल चित्त छोटे बच्चे की भांति हो जाओगे। उतना ही परमात्मा के नजदीक पाओगे। छोटे बच्चे प्रेम कर सकते हैं। छोटा बच्चा छोटी छोटी चीजों के प्रेम में पड़ जाता है। समुद्र के किनारे रंगीन पत्थर बीनने लगता है। शंख सीप बीनने लगता है। ज्ञानी कहता है फैंको इसे। लेकिन बच्चे की समझ में नहीं आता-उसको वो पत्थर जो सूरज की रोशनी में दिखता है हीरे की तरह चमक रहा है। वह बाप से चोरी नजरें बचा कर अपनी जेब में रख लेता है। उसे प्रेम उपजता है घास में फूल खिला है वह ठिठक कर खड़ा उसे देखता रहेगा वह तितली के पीछे भागने लगेगा-जैसे फूल को पंख लग गये हों उसे हर चीज बहुत सुंदर लगती है-क्योंकि वह कुछ नहीं जानता अज्ञानी है। लेकिन हम बड़े बजुर्ग महात्मा पंडित धीरे-धीरे उसमें ज्ञान ठूंस देंगे फिर बड़ा होकर वो ज्ञानी सब कुछ गंवा देता है।

एक लड़का अक्सर बकरियां चराने के लिए जंगल में जाता था। अक्सर उसे कई महात्मा या कोई पं. पुजारी कुछ जाप करते करते उसके पास से गुजर जाया करते थे। उसने सोचा यह क्या बोलते हैं? किसी एक को पूछा आप क्या बोलते जाते हो। पं. तो पंडित ठहरा अहंकारी उसने कहा दूर हट मुझ से छूना मत मैं परमात्मा के नाम का जाप कर रहा हूँ। पंडित ने कुछ नहीं बताया उसे वो भी ठहरा जिद्‌दी एक पत्थर पर बैठ कर भगवान् का नाम जपने लगा। अपनी बकरियों के नामों की गिनती करता कुछ अटपटा जो जी मैं आता जप लेता। भगवान् उस पर प्रसन्न हुये-वो झूमता गाता फिरता अपनी ही धुन में प्रभु को पुकारता और परमात्मा उससे बातें करता एक दिन रास्ते पर बड़े पहुँचे हुये महात्मा गुजरे। उन्होंने कहा यह क्या कर रहा है उसने कहा मैं प्रार्थना कर रहा हूँ। महात्मा ने कहा यह कोई विधि विधान नहीं है। आ बैठ हम तुम्हें प्रार्थना सिखाते हैं-महात्मा जी ने बड़ा सा मंत्र नई प्रार्थना उसे सिखाई। उसने

कहा महाराज इतनी लम्बी प्रार्थना मैं भूल जाऊँगा। महात्मा ने कहा फिर तेरी बकरियों वाली गिनती भगवान नहीं सुनेंगे। लड़का डर गया। घर आकर आसन लगा कर प्रार्थना करने लगा। पर भगवान उसके सामने नहीं आये वो रोने लगा, जंगल में गया : महात्मा जी फिर पधारे उस बकरी चराने वाले लड़के को ढूंढ़ने लगे-जब लड़का आया तो महात्मा जी बोले-तुम अपनी ही प्रार्थना करो अपनी बकरियों की गिनती ही तुम्हारी माला थी। हमारी प्रार्थना मत करना। तुम्हारी प्रार्थना सुन कर भगवान खुश थे। क्योंकि बच्चा अज्ञानी था। लेकिन हम हमारे बड़े बजुर्ग महात्मा पंडित धीरे धीरे हमारे अंदर ज्ञान ठूसेंगे। हर चीज को भगवान से जोड़ उस अज्ञानी बच्चों लोगों को समझा देते हैं, फिर धीरे-धीरे एक दिन वह विश्वविद्यालय से जब वापिस लोटेंगे ज्ञानी हो कर-तब सब कुछ गंवा कर कोरे कागज साथ लेकर सार्टिफिकेट लेकर आयेगा तो हर चीज का उत्तर होगा उसके पास। प्रेम क्या है? रसायन शास्त्र समझा देगा। वह सब कुछ समझा सकेगा। उसके लिए अनजाना कुछ भी नहीं होगा। प्रेम कैसे उपजेगा। जैसे-जैसे ज्ञान बढ़ा-वैसे वैसे दुनिया में प्रेम कम होता जाता है। शिक्षित आदमी और प्रेमी जरा मुश्किल जोड़ है। जितना शिक्षित होगा उतना ही प्रेमी कम। प्रेम के लिए थोड़ा अशिक्षित होना चाहिए। देहातों में अभी भी प्रेम बचा है। शहरों से प्रेम विदा हो चुका है। असभ्य के पास प्रेम है। सभ्य के पास प्रेम नहीं है। जो जितना सुसंस्कृत हो गया उतना ही उसके पास औपचारिकता है। लेकिन औपचारिकता में प्राण नहीं होते। कहीं कोई जीवन नहीं होता। सुसंस्कृत आदमी का कोई पड़ोस नहीं होता। क्योंकि पड़ोस तो प्रेम से बनता है। हमारे पूर्वजों ने हमारे अवतारों ने प्रेम को महत्व दिया। पड़ोसी से प्रेम करो, तभी तुम परमात्मा से प्यार कर सकते हो। अपने प्रेम को बढ़ाओ, प्रेम को फैलाओ। द्वापर में कृष्ण और सुदामा का प्रेम अद्‌भुत था।

यहां बरसों बीत जाते हैं और पड़ोसी से पहचान भी नहीं होती। सुसंस्कृत आदमी का कोई पड़ोसी नहीं क्योंकि पड़ोस बनता है प्रेम से एक दिन किसी शिष्य ने अपने गुरु से पूछा कि आप पड़ोसी किसको कहते हैं। गुरु जी ने

कहा एक आदमी मंदिर के लिए निकलता है एक सुनसान रास्ते पर। अचानक डाकुओं ने हमला कर दिया। उससे सब कुछ छीन लूट कर ले गया उसको छुरा मारा और गड्ढे में फैंक दिया। फिर उसी दिन उसी के गांव का एक पंडित वहां से गुजरा वो मंदिर में पूजा करने जा रहा था। एक पादरी भी निकला वहां से उसने देखा उस आदमी को कि जो इस पंडित के मंदिर में रोज पूजा अर्चना करने आता था। और आज वो गड्ढे में गिरा हुआ व्यक्ति मंदिर में ही तो जा रहा था। पादरी ने देखा वो घाव से कराह रहा था। उस आदमी ने कहा-मुझे बचा लो पंडित जी-मैं मर रहा हूँ मुझे बचा लो। पंडित ने सोचा अगर मैं इसको उठाऊँ तो झंझट में पड़ जाऊँगा। पूजा का समय निकले जा रहा है। खाहमखाह पुलिस पीछे पड़ेगी क्या हुआ? कैसे हुआ? किसने मारा? तुम वहां क्या कर रहे थे? तुम्हारी कोई दुश्मनी तो नहीं थी? फिर मुझे अभी मंदिर में आरती भी करनी है। भगवान् की पूजा का समय हो रहा। और इन झंझटों में पढ़ कर मंदिर की जगह पुलिस थाने में जाना पड़ेगा। और मर मरा गया तो अस्पताल तक भी जाना पड़ सकता है सो पंडित जी ने पीठ फेर ली और चल पड़ा मंदिर की ओर। फिर दूसरे किसी गांव का राहगीर वहां से गुजरा, जिसने इस आदमी को कभी देखा तक नहीं था, वह पास गया उसने उसे अपने घोड़े पर बैठाया, उसके घाव धोये पास ही धर्मशाला थी वहां ले गया कुछ खिलाया पिलाया। फिर डाक्टर को बुलाया-गुरु महाराज ने कहा तुम किसको पड़ोसी कहते हो? पंडित पुरोहित पादरी पड़ोसी था जो उसी के गांव का रहने वाला था, या वो अजनबी जिसने उसको खड्ढे से निकाला। शिष्यों ने कहा स्वभावतः अजनबी आदमी ही उसका पड़ोसी रहा। सही मानवता की पहचान। गुरु जी ने कहा जहां प्रेम है, वहीं पड़ोस है। जहां प्रेम है वहीं सब कुछ है जितना बड़ा प्रेम है उतना बड़ा पड़ोस है। वही मंदिर मस्जिद गुरुद्वारा है। अगर प्रेम बड़ा हो तो सारा ब्रह्मांड पड़ोस है।

और प्रेम की सीमा पड़ोस को सीमा है सारी पृथ्वी पड़ोस है। प्रेम यानि पड़ोस जैसे जैसे शिक्षा बढ़ती है, ज्ञान बढ़ता है, और प्रेम संकुचित होता जाता

है इसलिए ज्ञान भक्ति में सहयोगी तो होता नहीं। जब भक्ति का जन्म होता है। तो वो मनुष्य परमात्मा से जुड़ता है। तब उसे पता चलता है कि जो ज्ञान मैंने इकट्ठा करके रखा था। वह सब कंकड़ पत्थर थे अब मैं शास्त्रों का ज्ञान इकट्ठा करके अपने अंदर शास्त्रों को जन्म दूँ। अपने अंदर उपनिषद्, गीता को उतारूं जो मेरे गर्भ में पल रहे थे, पक गये हैं अब उन फल फूलों में फूल खिलने लगे हैं। भक्ति और ज्ञान ऐसे है जैसे अंधेरा और रौशनी अब रौशनी है, अंधेरा नहीं है। क्योंकि भक्ति का जन्म हुआ है। रोज रोज नए छंद, नए गीत उमगेंगे रोज रोज ओंकार नये रूपों में प्रगट होंगे प्रेम से। कोरेपन में प्रेम द्वार है परमात्मा का ज्ञान नहीं।

०००

आत्म अनुसंधान

आत्म अनुसंधान का अर्थ है, आत्म सुधार-अपने को खोजना जानना। हमारा जीवन कैसे आत्म केंद्रित हो। कैसे स्वयं का अनुभव हो। जो वीणा का नियम है, वही जीवन वीणा का भी नियम है। जीवन के तार बहुत ढीले हो तो संगीत पैदा नहीं होता। बहुत कस के रखे हों तो भी संगीत नहीं पैदा होता। पर वह जीवन की वीणा है कहाँ? मनुष्य के शरीर के अतिरिक्त और कहीं कोई जीवन वीणा नहीं है। उसके संगीत को जानना है। जब व्यक्ति अपने भीतर के संगीत को जान लेता है। तो वो आत्मा को भी जान लेता है और वो सबके भीतर छिपे संगीत को भी जान लेता है तो वह परमात्मा को भी जान लेता है। आत्मा परमात्मा को जानने के लिए सबसे जरूरी है। भोजन यानि आहार की शुद्धि, भजन हम तभी कर सकते हैं जब कि आपका भोजन कैसा है? क्या है? कैसे खाते हो। भोजन अगर भोग है तो रोग है, यानि भोगोगे। भोजन को धन्यवाद दे कर बनाया खाया जाये तो योगी बनोगे। भोजन को प्रसाद बनाओ। प्रसाद हमेशा बांटा जाता है। बंटता है, और वही प्रसाद खाया जाये तो योगी बनोगे और योग से भक्ति प्रगट होती है। प्रसाद में सबके हिस्से होते हैं। भोजन में गाय का, कौआ का, कुत्तों का और कोई भूखा हो सबके हिस्से होते हैं ऐसा भोजन आपके नाभि केंद्र में ऊर्जा परोसता है। भोजन करने से पहले अपनी थाली को देखें कि उसमें किसी की आहें आंसू तो नहीं हैं। आप वही बनने वाले हैं जो आपकी थाली में पड़ा है। शुद्ध आहार की थाली आपके सामने आये तो देखो और रस लो हाथ में ग्रास आये तो नासिका सूंघ लेती है। मराठी गुजराती, थाली में छोटी-छोटी चीजें डाली जाती हैं कि थाली आकर्षित हो और मुँह में रस आ जाये। भोजन ऐसे करें जैसे कोई मंदिर

में प्रवेश करता है। जैसे कोई प्रार्थना करता है जैसे कोई अपना साज ठीक से बैठा रहा होता है। क्योंकि रस शरीर के अंदर भोजन ही पहुँचा रहा होता है। जितना आनंद से भोजन करें वही सही है। हिंसक भोजन यही नहीं है कि आप मांसाहारी भोजन कर रहे हैं। क्रोध में भोजन करेंगे तो वो भी हिंसक भोजन ही है। क्योंकि अंदर आप ही का मांस जल रहा है। वहां हिंसा मौजूद है। आत्मसंधान करने के लिए अपनी प्रकृति को समझना पड़ेगा सबसे पहले सम्यक भोजन (2) निद्रा (3) श्रम-जो इन्सान इन तीनों चीजों से वंचित है उसका नाभि केंद्र (विल पावर) (ऊर्जा) कुंडली को जागृत नहीं कर सकता और इन तीनों चीजों से मनुष्य जाति वंचित हो गई है। मनुष्य अकेला प्राणी है जिसके आहार का कोई ठिकाना नहीं है कि कब खाये क्या खाये? और कितना खाये। मनुष्य बिल्कुल ही अनिश्चित है। न ही उसकी प्रकृति कुछ कहती है यह सब बातें कि उसका खान-पान कैसा हो। इसलिए मनुष्य का जीवन अस्त व्यस्त हो कर अनिश्चित दिशा की ओर चला गया है। समझदारी बुद्धिपूर्वक आंखें खोल कर जीना शुरू कर दें तो सब प्रकार की व्याधियों से वंचित होकर स्वास्थ्य पूर्ण जीवन जी सकेगा। बाकि प्राणियों का आहार सुनिश्चित है उनकी मूल प्रवृत्ति निर्धारित करती है कि वह क्या, कब खायें कितना खायें। वो प्राणी प्रकृत्ति के साथ-साथ जीते हैं। जंगली हिंसक जानवरों का पेट भरा हो तो वो सामने पड़ा हुआ शिकार नहीं खाते। पशु मौसम के साथ-साथ वही फल सब्जी खायेंगे। वे मौसमी सब्जी उनके आगे डालो तो वो सूंघ के आगे चले जाते हैं। बीमार होने पर अपनी दवा भी खुद कर लेते हैं। कई बार कुत्ते को देखा कि छोटी-छोटी हरी घास खाता है और फिर वमन उल्टी कर देता है। मनुष्य हर मौसम बे-मौसम फल सब्जियां खा लेते हैं। उनको पहली बात समझ लेनी चाहिए कि क्या, कब खायें क्योंकि शरीर की सारी प्रक्रिया अत्यन्त रासायनिक है। अगर कोई भोजन उत्तेजक है, खट्टा-मीठा तीखा हो मनुष्य की चेतना को नुकसान पहुँचाता है और वो नुकसान गहरे से गहरे हमारी नाभि केंद्र पर पड़ता है। हमारा आहार न मादक हो व भारीपन लाने वाला हो। हमें कितना भोजन लेना चाहिए। आधे भोजन से हमारा पेट

भर सकता है पर आधा भोजन से हम डाक्टरों का पेट भरते हैं। कुछ लोग इसलिए बीमार हैं कि उनको भर पेट भोजन नहीं मिलता-और कुछ लोगों को अधिक यानि कुछ भूख से मरते हैं कुछ भोजन से। इन्सान न भोजन को यत्रिक क्रिया बना लिया है।

शरीर में डाल दिया चलते चलते ही खा लिया। वह कोई मानसिक प्रक्रिया नहीं है। यह घातक बात है। जीवन बहुत कीमती है। धन्यवाद दें भगवान् को कि आज का दिन मिला है मैं जीवित हूँ। जरूरी नहीं है कि मैं आज जीवित ही होता कब्र में भी हो सकता था। आज के दिन के लिए मैंने कोई कीमत नहीं चुकाई। जीवन मुफ्त में मिला। कम से कम धन्यवाद का भाव लायें। समस्त जगत के प्रति समस्त प्रकृति के लिए भगवान् के प्रति अनुग्रह का बोध होना चाहिए कि मुझे जीवन का एक दिन मिला है। एक दिन ओर भोजन मिला है। मैंने सूर्य चांद को देखा है फूलों को खिलते देखा है आज और मैं जीवित हूँ रविन्द्रनाथ टैगोर की मृत्यु आई। दो दिन पहले उन्होंने कहा था। हे परमात्मा, मैं कितना अनुगृहीत हूँ, कैसे कहूँ तूने मुझे जीवन दिया, जिसे मैं पाने के काबिल नहीं था। तूने मुझे सांसें दी जिसको पाने का कोई अधिकार नहीं था मुझे। तूने सौंदर्य आनंद के अनुभव दिये मैंने कोई कमाई नहीं की थी। अगर मैंने अपने जीवन में कोई दुख चिंता पाई है तो वो मेरी ही भूल होगी। तेरा जीवन तो बहुत बहुत आनंद पूर्ण रहा। मैं नहीं कहता कि तूं मुझे मुक्ति दे। अगर तूं मुझे योग्य समझे तो बार-बार मुझे जीवन में भेजते रहना। ऐसे ही भाव होने चाहिए आहार करते समय भगवान् का धन्यवाद देने के मौके है यही भक्ति है। यह भाव कृतज्ञता के भाव हैं। दूसरा कारण है व्यायाम श्रम करना जीवन और श्रम एक ही अर्थ रखते हैं। अर्थ में बहुत से लोगों ने श्रम करना छोड़ दिया है। हर आदमी के हाथ में श्रम होना चाहिए। लेकिन हमने श्रम करना छोड़ दिया है। श्रम खोकर बहुत कुछ खो दिया है। मनुष्य के प्राण किसी विशिष्ट श्रम के लिए निर्मित हैं और हमने उसे खाली छोड़ दिया है। जंगल में हर प्राणी को अपना शिकार अपना

भोजन खुद ढूंढ़ना पड़ता है जवान से लेकर बूढ़े तक अपना भोजन श्रम से प्राप्त करना पड़ता है। कई कई बार उसे खाली हाथ ही लौटना पड़ता है। और इंसान ने अपने सब काम दूसरों से करवाना शुरू कर दिया है। यहां तक कि प्रार्थना पूजा पाठ अपने ग्रहों की शांति पाठ भी पैसे देकर दूसरों से करवाते हैं। श्रम मनुष्य की चेतना ऊर्जा को जमाने के लिए अनिवार्य हिस्सा है। हम मनुष्य जाति जीवन से सीधा सम्बंध खो रहे हैं। जीवन के साथ हमारे सीधे संबंध श्रम के सम्बंध है। प्रकृति के साथ भी सीधे संबंध है। जीवन और श्रम एक ही अर्थ रखते हैं। एक अर्थ में बहुत से लोगों ने श्रम करना छोड़ दिया है। कुछ लोगों को ज्यादा श्रम करना पड़ता है। ज्यादा श्रम भी जान लेवा है, और कम श्रम भी प्राण ले लेता है। हर आदमी को श्रम करना चाहिए। आदमी जितना श्रम करेगा उतना ही उसका नाभि केंद्र मजबूत होगा-वो पायेगा कि उसकी जीवन धारा मस्तिष्क से उतर कर नाभि के करीब आने लगती है वैसे श्रम के लिए दिमाग हृदय की जरूरत नहीं होती। श्रम तो सीधे नाभि से ही ऊर्जा ग्रहण करता है-इसी ऊर्जा को हम इम्यूनिटी (विलपावर) कहते हैं जिसकी आजकल चर्चा हैं। संतुलित आहार के साथ-साथ श्रम अत्यन्त आवश्यक है अगर हम श्रम करेंगे तो बहुत बड़ी जीवन सेवा कर रहे हैं। एक आदमी जो कभी बड़ा मंत्री थे रिटायर हो गये तो किसी ने पूछा आजकल आप कहां काम कर रहे हैं-क्या करते हैं? उन्होंने कहां मैं श्रम करता हूँ मेरे साथ राजनीति की बात मत करना। मेरा उससे कोई सम्बंध नहीं है। अब वह दौर खत्म हो चुका है। आजकल मैं अपने बगीचे में काम करता हूँ श्रम को महत्व देता हूँ और अपने धार्मिक ग्रंथ पढ़ता हूँ। अपना आत्म अनुसंधान करता हूँ। मेरा श्रम और मेरी प्रार्थना है दोनों एक ही बात है। मनुष्य के समाज में दो आदरणीय वर्ग श्रम से दूर हो गये। जिनके हाथ में श्रम आया वो अनादरणीय हो गये। जो श्रम से बच गये वो तरह तरह की व्याधियों के शिकार हो गये। क्योंकि शरीर की सारी स्फूति और प्राणों की पूरी सजगता के लिए श्रम अत्यन्त आवश्यक है लोग इस हिस्से को भूल गये है। जिस तरह कुछ कम खाते हैं कुछ ज्यादा इसी तरह कुछ श्रम करते हैं या बिल्कुल

नहीं करते। कुछ अधिक दोनों ही नुकसान दायक हैं। अपनी जिंदगी को प्रर्दशनी मत बनाओ। जिंदगी और प्रदर्शनी में फर्क है। हर आदमी को जान लेना चाहिए कि उसकी प्रकृति कैसी है। कितना खाये कितना श्रम करे ताकि ताजगी बनी रहे। एक रूग्ण और बीमार आदमी परमात्मा के प्रति धन्यवादी नहीं हो सकता वो न तो अपने आप को जान सकता है न परमात्मा को। वह योगी नहीं रोगी हो सकता है।

श्रम के बाद नीद्रा-मनुष्य जाति की सभ्यता के विकास में सच्ची सबसे ज्यादा किसी चीज की हानि हुई है वह है निद्रा जिस दिन आदमी ने बिजली को इजाद किया उसी दिन से नींद की हत्या हुई है। जो आदमी ठीक से खा नहीं सकता सो नहीं सकता वह जी कैसे सकता है। वह आदमी अपनी ऊर्जा नाभि केंद्र को कैसे जगा सकता है उसकी जीवन की वीणा के तार या तो कसे रहते हैं या ढीले-ऐसे साज में संगीत कहां से उत्पन्न हो सकता है। आजकल निंद्रा को फजूल समझा जाता है। बच्चे रात को देर तक पढ़ा करते हैं। चाय काफी पीकर पढ़ाई करते है कि नींद न आ जाये, और सुबह सूरज उगने पर भी बहुत देर से उठते हैं। हमारे ऋषि मुनियों ने नींद्रा का हनन नहीं किया। उन्होंने बड़े-बड़े ग्रंथ लिखे पर नींद पूरी करके वो सुबह ब्रह्म मुर्हूत में उठते थे। क्योंकि 7-8 घंटे की नींद से जीवन में ऊर्जा इकट्ठी होकर पुनः प्राण जीवित हो जाते हैं। नींद्रा आपको वापिस प्रकृति और परमात्मा के साथ एक कर देती है। तभी अंदर के सोये हुये साज जाग उठते हैं। बच्चा माँ के पेट में 24 घंटे सोया रहता है तभी उसका शरीर ठीक से विकसित होता है। बच्चा पैदा होता है तो 18 घंटे सोया रहता है क्योंकि उसका शरीर बन रहा होता है। जैसे जैसे वो परिपक्व होता है तो नींद भी कम होती जाती है। अगर बड़े बूढ़े बच्चे की तरह सोये रहे तो कभी मर नहीं सकते। मरने के लिए नींद कम होनी जरूरी है।

मनुष्य का अहार ठीक हो नींद ठीक हो, श्रम भी ठीक हो यह तीनों सूत्रों पर ठीक से जीवन की गति हो, तो तभी नाभि केंद्र कुंडली जागृत होती

है। यही जीवन की वीणा है। यहां से संगीत प्रगट होता है भक्ति प्रगट होती है एक योगी प्रगट होता है। जो आत्मिक जीवन का द्वार है। उसके खुलने की सम्भावनायें बहुत बढ़ जाती है उस द्वार के निकट पहुँच कर अपनी आत्मा का अपने आप का मेल हो जाता है वहां ही परमात्मा है।

ooo

धर्म

धर्म तो सदा है। जो सदा से है उसी का नाम धर्म है। उसकी न तो स्थापना करनी होती है न कभी उसे कोई मिटा सकता है। उसका मिटना संभव नहीं। अगर धर्म मिट जायें तो हम सब बिखर जायेंगे। अगर धर्म मिट जाये तो चांद तारे न चलें। सूरज न निकले, पानी न बहे, हवा न उठे, फूल न खिलें पक्षी न गायें। लोग न हों। धर्म टूटा कि सब कुछ टूट जायेगा। धर्म तो सब को जोड़े हुये है। धर्म तो वह धागा है जिसने सब को सारे फूलों को गूंथा है। धर्म की स्थापना नहीं की जाती है और न ही कभी धर्म को स्थापित किया जाता है न अस्थापित होता है, धर्म तो वही है जो शाश्वत है धर्म तो इस जगत का नियम है। धर्म ने इस जगत को धारण किया है। इसलिए 'धर्म' कहते है। जैसे आग जलती है, और गर्म है। ऐसा ही इसके अस्तित्व का स्वभाव धर्म है। धर्म यानि स्वभाव किसी ने आकर स्थापना नहीं की, धर्म तो इस जगत को सम्भालने वाले सूत्र का नाम है। हिंदू धर्म में दो शब्द हैं। हिन्दू और धर्म। अगर हिन्दू पर बहुत ज़ोर है तो हम पगाल हैं। अगर धर्म पर ज़ोर है तो तुम बुद्धिमान हो। जैसे जैसे धर्म पर जोर बढ़ेगा, हिन्दू पर ज़ोर कम होता जायेगा। फिर एक दिन हिन्दू विदा हो जायेगा और धर्म रह जायेगा फिर जब एक दिन धर्म समाप्त हो जायेगा-हिन्दू बचा रहेगा।

हिन्दू धर्म दो दिशायें खोल रहा है। एक धर्म की ओर दूसरी हिन्दू की ओर। अगर हिन्दू की राह पकड़ी तो राजनीति में पड़ जाओगे। अगर धर्म की राह पकड़ी तो अध्यात्म में उतर जाओगे। वहां पहुँच जाओगे यहां न हिन्दू होगा न मुसलमान गुरु तेग बहादुर, गुरु गोबिंद साहब जी ने कुर्बानियां दी- हिन्दू की शरण में आकर दी। नहीं, यह परमात्मा के लिए दी-असली राजधर्म

था उनके अंदर। जो इस बात को समझ लेता है वह केवल धर्म के लिए अपने आप को समर्पित करता है। हिन्दू के लिए नहीं हिन्दू राजनीति का नाम है।

उन्होंने जो कुछ किया वो धर्म के लिए किया। हिंदू धर्म से कुछ भी लेना-देना नहीं था उनको। जिन्होंने जाना है, उनके लिए हिंदू, मुसलमान, सिक्ख इसाई में कोई फर्क नहीं रह जाता। यह सब ऊपर की बातें हैं उनके भीतर असली राजधर्म तो एक है। परमात्मा एक है, नानक ने कहा-एको ओमकार सतनाम-बाकि सब विधियां हैं। जिसने सत्त नाम को जाना वह धर्म के लिए अपने आप को समर्पित करता है। हिन्दू के लिए नहीं हिंदू राजनीति का नाम है। मुसलमान, सिक्ख सब राजनीति के नाम है। धर्म बड़ी अलग बात है। मंदिर मस्जिद गुरुद्वारा बना लिए हैं इसके अंदर जो पूजा हो रही है वह एक है जो गीता, कुरान, वेदों में ग्रंथ साहब में जो पढ़ा जा रहा है, शब्द अलग-अलग हैं पर वह एक है। जिसे एक दिखाई पड़ता है, वह धार्मिक है। जिसे अनेक दिखाई देता वो पागल समझा जाता है। यह पाठशाला नहीं है यह विश्व विद्यालय है यहां क-ख-ग मत करो। नहीं तो तब तुम छोटी छोटी पाठशालाओं को खोजो। भाषाऐं अलग-अलग हैं पर भाव एक हैं। दुनिया में ऐसा कोई धर्म नहीं है जिसमें शरण के भाव न हो। शरण में तो जाना ही होगा। महावीर के मार्ग पर कोई परमात्मा नहीं है परन्तु शरण का भाव आया। इस्लाम ने मूर्तियां हटा दी तो भी शरण का भाव है। भक्ति से छुटकारा नहीं। भक्ति के तत्व के बिना कोई धर्म निर्मित नहीं होता-वो ऐसा है जैसा इतनी मिठाईयां बनती हैं लेकिन मिठास अनिवार्य है चाहे मिठाईयां कितने रूप ले लें-गुलाब जामुन बर्फी रस मलाई कई तरह की मिठाइयां है पर मिठास सब में एक हैं भक्ति शक्कर है चीनी है उसके बिना कोई मिठाई नहीं बनती न बनेगी मिठाई। किस तरह से किस ढंग से मिठाई बनाएगा। यह हम पर निर्भर है। दुनिया के सारे धर्म अलग-अलग मिठाईयां है। भक्ति सबके भीतर छिपी हुई है वो मिठास है। उनमें एक तत्व सामने है वो है मिठास का। नमक डाल कर मिठाई नहीं बनती और न ही उसे मिठाई कह सकते हैं। फिर वो मिठाई कही भी बने हिन्दोस्तान में या पाकिस्तान में पर मिठास अनिवार्य

होनी चाहिए। जैसे देह अलग-अलग है पर प्राण तत्व एक है। गोरे काले में मोटे पतले में काने गूंगे में बहुत से रूप हैं पर देह में प्राण तत्व एक हैं। भक्ति प्राण तत्व है सब धर्मों में। जैसे प्राण के बिना देह मुर्दा है। इसी तरह भक्ति के बिना धर्म मुर्दा है। जिस धर्म में भक्ति है वो खो जाती है। वह मुर्दा हो जाती है। जिस मात्रा में भक्ति होती है। उसी मात्रा में धर्म जीवित रहता है। जैसे आत्मा सबके भीतर एक है। वैसे ही सभी धर्मों में विधियों में प्राण हैं प्रेम है भक्ति है, वहीं भगवान है। हिन्दू के लिए कृष्ण भगवान है। उन्हें सबसे बड़ा भगवान् मानते हैं। पूर्ण अवतार कहा गया है। राम अधूरे हैं बुद्ध भी अधूरे हैं। कृष्ण पूरे हैं। बुद्ध संसार से भाग गये। जीवन में संतुलन नहीं है। असंतुलित जीवन था उनका। कृष्ण का जीवन संतुलित था। बाजार में भी है वो और बाजार में नहीं भी है। यह संतुलन है? युद्ध में खड़े हैं परन्तु भीतर शांति। यह है असंतुलित मनुष्य पूरा नहीं है। अधूरा है और अधूरेपन में पीड़ा है। मनुष्य का दुख यही है कि मनुष्य पूरा नहीं है। पशु पक्षी पूरे हैं। मनुष्य के भीतर का फूल खिला ही नहीं इसलिए अधूरा है धर्म और मनुष्यता एक ही नहीं। धर्म मनुष्य को पार ले जाने वाली सीढ़ी है। पार जाने की कला है धर्म। पार जाना यानि ऊपर उठना धर्म का अर्थ होगा पूर्ण मनुष्य होने की कला। धर्म न होगा तो मनुष्य मनुष्य ही रह जायेगा। और मनुष्य का मनुष्य रह जाना ही दुख है।

धर्म मनुष्य को पार ले जाने का विज्ञान है। और इस विज्ञान की समझ लगने में गुरु की आवश्यकता है। साहस हो तो हर जगह शिक्षण मिल जाता है। सीखने की कला आती हो तो हर मार्ग में मंदिर मिल जाता है। सीखना न आता हो तो शिष्य होने की कला नहीं आती-जैसे कोई पानी से डर कर नदी में ही नहीं उतर पायेगा तो उसे तैरना कौन सिखायेगा तैरने के लिए नदी में उतरना पड़ेगा किसी पर भरोसा रखना पड़ेगा कि जब तुम डूबने लगो तो कोई बचाने आयेगा। सद्गुरु तैरना सिखा सकता है-हाँ बहुत से लोग हुये जिनका कोई गुरु नहीं था। परन्तु उनका सारा अस्तित्व ही गुरु था। बुद्ध महावीर

नानक राम कृष्ण परम हंस इनके गुरु नहीं थे। इन्होंने किसी को गुरु नहीं बनाया। ऊपर से देखो तो बुद्ध का कोई गुरु नहीं था-क्योंकि जब सारा अस्तित्व ही गुरु हो तो किसको गुरु बनायें-नदी नाले पहाड़ चांद तारे पशु-पक्षी सभी गुरु थे उनके अगर नानक बुद्ध और महावीर जैसे गुरु बना सको तो फिर कोई किसी गुरु की जरूरत नहीं है। यह सारा विराट अस्तित्व क्षुद्र से लेकर विराट तक सब तुम्हारे गुरु हो जायें सब चरण तुम्हारे लिए प्रभु के चरण हो जायें।

धर्म क्या है। धर्म की काया छू कर कैसे देखें। धर्म की प्रतिमा कैसे बनायें, पर आकार कैसा होगा। वाल्मीकी बोले धर्म की मूर्ति नहीं होती है। उसे देखा नहीं, जीया जाता है। धर्म आचरण की चीज है, जीने की कला है। भागवत को ज्ञान यज्ञ कहा जाता है अपने आनन्द के लिए है (धर्म) लेकिन आजकल कुछ लोगों की आस्था धर्म से क्यों उठ गई है। धर्मों के कारण ऐसा कोई मनुष्य होगा जो किसी न किसी रूप में जाने अनजाने धर्म की खोज न करता होगा। धर्म की खोज करना भी मनुष्य के लिए स्वाभाविक है। जैसे भूख लगती है प्यास लगती है हर आदमी को। हर आदमी को प्रेम की आकांक्षा जागती है, इसी तरह आदमी को प्रभु की आकांक्षा भी जागती है। नाम चाहे अलग अलग क्यों न हो। कौन होगा जो अमृत नहीं चाहता है लेकिन धर्म से श्रद्धा उठ नहीं सकती, लेकिन धर्मों से उठ सकती है। जिनकी श्रद्धा धर्मों से उठ जाती है, वह धार्मिक हो सकते हैं। मंदिरों मस्जिदों में झूठे धार्मिक लोग मिलेंगे। सच्चे धार्मिक लोगों की मंदिर मस्जिदों से श्रद्धा उठ जाती है-वह कृष्ण, क्राइस्ट और मुहम्मद को खोजता है, वह पुजारी, पंडित, मौलवी को नहीं खोजते। जिन्होंने उधार के शास्त्र रटे हुये हैं पर अनुभव नहीं किये हैं। उनको अपने आप का पता नहीं वो दूसरों को क्या समझायेंगे। उनके अपने दीये बुझे हुये हैं। वह दूसरों के क्या रौशन करेंगे। सच्चा धार्मिक इन्सान गुरु को खोजता है। सिद्धांत को नहीं खोजता। उससे मिलना हो तो जो जुड़ा हो सेतू से मिला दें। मंदिर, मस्जिद परम्परा से मिलते हैं और पंडित, पुजारी मौलवी वो हमें बिना चुने ही मिलते हैं।

०००

चाबी (कूंजियां)

आईंस्टीन से मरने के पहले किसी ने पूछा कि तुम अगर दोबारा जन्म लो तो क्या बनना चाहते हो ? उसने कहा, मैं एक पलंवर बनना पसंद करूंगा बजाय एक वैज्ञानिक होने के। क्योंकि वैज्ञानिक होकर देख लिया कि मेरे माध्यम से, मेरे बिना जाने, मेरी बिना आकांक्षा के मेरे विरोध में, मेरे ही हाथों से जो काम हुआ उसके लिए मैं रोता हूँ क्योंकि शक्ति तो खोजता है वैज्ञानिक और राजनीतिज्ञ के हाथ पहुँच जाती है। और राजनीतिज्ञ पूरी तरह से अशुद्ध आदमी है। क्योंकि उसकी दौड़ शक्ति की है। उसकी चेष्टा ही महत्वकांक्षा की है, दूसरों पर हावी होने की। आईंस्टीन, जिसने हाथ बंटाया अणु शक्ति के निर्माण में। उसने कभी सोचा भी नहीं था कि हिरोशिमा और नागासाकी में एक-एक लाख लोग जल कर राख हो जायेंगे मेरी खोज से। आईंस्टीन ने अपने अंतिम पत्रों में अपने मित्रों को लिखा है कि भविष्य में अब हमें सचेत हो जाना चाहिए कि हम जो शक्ति खोजें उसको गुप्त रखें। क्योंकि शक्ति किसी गलत अदृश्य आदमी के हाथों में नहीं पड़नी चाहिए।

मनुष्य तो एक यंत्र है और शक्ति तो सभी परमात्मा की है। चाहे बुरा हो चाहे भला। शक्ति स्त्रोत तो एक ही है। राम में भी वही शक्ति है, रावण में भी वही शक्ति थी। फर्क इतना था कि एक के पास शुद्ध हृदय है दूसरे के पास अशुद्ध हृदय था। शुद्ध हृदय से जीवन बहने लगता है, अशुद्ध हृदय से मृत्यु बहने लगती है। हिन्दू संस्कृति में सद्गुरु ने सैंकड़ों लोगों पर साधना के प्रयोग किए करवायें हैं जिससे कि अंतःकरण शुद्ध हो और शक्ति हाथ में आने से पहले अंतःकरण शुद्ध हो जाये। शक्ति अशुद्ध को भी मिल सकती है। इसलिए शक्ति के स्त्रोत छिपा के रखे जाने चाहिए। सीक्रेसी योगी यंत्र और

धर्म के आस पास गुप्त रखने का कारण यही है कि गलत हाथों में न पड़ जाये। खतरनाक आदमी को भी मिल सकती है। जब कोई विज्ञान, चाहे आंतरिक हो या बाह्य-ऊंचाइयों पर पहुँचता है तो खतरे शुरू हो जाते हैं। पश्चिम मैं अब कहना शुरू किया कि नई खोजें विज्ञान सब गुप्त रखी जायें। क्योंकि विज्ञान की नई खोजें, अब खतरे की सीमा पर पहुँच गई हैं। वे बुरे आदमी के हाथ भी पड़ सकती हैं। क्योंकि अक्सर राजनीतिज्ञ के हाथ में पड़ जाती हैं सारी खोज। हंसी आती है, मुझे उनकी सोच पर कि यह ख्याल पश्चिम को अब आ रहा है। लेकिन हिन्दुओं को यह ख्याल आज से तीन हजार साल पहले आ गया था। न केवल विज्ञान के संबंध में बल्कि धर्म के संबंध में भी। हमारे ऋषियों ने जंगलों में प्रयोगशालाएं बनाई, ध्यान करके यंत्रों से शक्ति सिद्धियां पाई और सूत्र खोजे और अत्यंत गुप्त रखे कि जब कोई शिष्य जिसे गुरू इस योग्य समझेगा, तब वह उसके कान में दे देगा गुप्त रूप से। जब वो समझेगा कि शिष्य इस योग्य हुआ कि शक्ति का दुरुपयोग न होगा। इसीलिए जो भी महत्वपूर्ण है, वह शास्त्रों में वही लिखा हुआ है। शास्त्रों में तो सिर्फ आधी अधूरी बातें लिखी हैं। कोई भी गलत आदमी शास्त्र के माध्यम से कुछ भी नहीं कर सकता। शास्त्र में मूल बिंदू छोड़ दिए हैं। जैसे सब बता दिया गया है, लेकिन चाबी शास्त्र में नहीं है। महल का पूरा वर्णन है। भीतर के एक एक कक्ष का वर्णन है, लेकिन ताला कहां लगा है, उसकी किसी शास्त्र में कोई चर्चा नहीं है और चाबी का तो कोई हिसाब शास्त्र में नहीं है। चाबी हमेशा व्यक्तिगत हाथों से गुरू शिष्य को देगा। जिसको हम मंत्र कहते हैं और दीक्षा कहते रहे वह सीक्रेसी गुप्तता में जो जानता है उसके द्वारा उसको चाबी दिये जाने की कला है। जिससे खतरा नहीं हैं, जो दुरुपयोग नहीं करेगा, और चाबी को सम्भाल कर रखेगा, जब तक कि योग्य आदमी न मिल जाये। और अगर योग्य आदमी न मिले तो हिन्दूओं ने तय किया कि चाबी को खो जाने देगा। हर्ज नहीं है कि गुम हो गई जब भी योग्य आदमी पैदा होंगे, चाबी फिर खोजी सा सकती है, लेकिन गलत आदमी के हाथ में चाबी मत देना, वह बड़ा खतरा है। और एक बार गलत आदमी के हाथ चाबी

चली गई तो अच्छे आदमी के पैदा होने का उपाय ही समाप्त हो जायेगा। ज्ञान चाहे खो जाये, लेकिन गलत को मत देना। यह जो हिन्दुओं ने ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र की व्यवस्था की, उस व्यवस्था में यह सारा का सारा ख्याल था। ब्राह्मण के अतिरिक्त चाबी किसी को न दी जाये। शूद्र के हाथ तक तो पहुँचने न दी जाए।

शूद्र से कोई मतलब उस आदमी का नहीं है, जो शूद्र के घर में जन्मा है हिंदुओं का हिसाब बहुत अनूठा है। हिंदुओं का हिसाब यह है कि पैदा तो हर आदमी शूद्र ही होता है। शूद्रता तो जन्म से सभी को मिलती है इसलिए ब्राह्मण को हम द्विज कहते हैं। उसका दोबारा जन्म होना चाहिए उसे वह गुरू के पास जाना होगा, फिर से उसका जन्म होगा। माँ-बाप ने जो जन्म दिया उसमें सब शूद्र ही पैदा होते हैं। उससे कोई कभी ब्राह्मण पैदा नहीं होता। ब्राह्मण तो पैदा होता है गुरू की सन्निधि में। वह दुबारा उसका जन्म होगा वह ट्वाइस बार्न पैदा होगा। इसलिए हम उसे द्विज कहते हैं। जिसका कि दूसरा जन्म हो गया और दूसरे जन्म के बाद वह अधिकारी होगा कि गुरू उसे जो गुह्य है, जो छिपा था गुरु के अंदर वह दे जो नहीं दिया जाता आम सामान्य लोगों को, वह उसे दे। वह उसकी धरोहर होगी इसलिए सैंकड़ों वर्ष तक हिन्दुओं ने चेष्टा की कि उनके शास्त्र न लिखे न जाये, कंठस्थ किए जायें। क्योंकि लिखते ही चीज सामान्य हो जाती है, सार्वजानिक हो जाती है। फिर उस पर कब्जा नहीं रह जाता और जब लिखे भी गए शास्त्र, तो उन्होंने मूल बिंदू छोड़ दिए गये हैं, इसलिए आप शास्त्र कितना भी पढ़ लें, सत्य आपको नहीं मिल सकेगा अंततः आपको गुरु के पास जाना पड़ेगा। शास्त्र आप में प्यास जगायेंगे बेचैनी पैदा करेंगे- और चाबी कहां हैं ? चिंता पैदा करेगी। तब आप गुरू की तलाश में निकलेंगे जिसके पास चाबी है।

आध्यात्मिक विज्ञान तो और भी खतरनाक है। इसलिए गुरुकुलों में शिष्यों को कंठस्य करवाते थे, क्योंकि सूत्रों की चोरी भी हो सकती है। धन की चोरी नहीं हो सकती, पर सूत्रों की चोरी हो सकती है, भारत में बहुत दिन तक

वैसा ही हुआ। बौद्धों के पास कुछ सूत्र थे- जो हिन्दुओं के पास नहीं थे तो हिन्दू बौद्ध भिक्षु बन कर कई वर्ष तक बौद्ध गुरुओं की शरण में रहे, ताकि कुछ सूत्र वहां से पाये जायें। कुछ सूत्र हिन्दुओं के पास थे जो जैन बौद्धों के पास नहीं थे और जैन और बौद्ध, हिन्दू बन कर वर्षों तक हिन्दू गुरुओं की शरण में रहे, ताकि कहीं से कुछ पाया जा सके। और जैसे उन्होंने पा लिया, वह दूसरी परंपरा को दे दिया गया है। हिन्दुओं ने फिर भी अपने सूत्र गुप्त ही रखे क्योंकि बच्चों के हाथ में तलवार नहीं दी जा सकती और जो दे वह मंगलदायी नहीं है। हमारे दुर्वासा ऋषि रूस के राष्ट्रपति पुतिन की तरह शक्तिशाली लोग हैं उनके पास ऊर्जा थी लेकिन हृदय की शुद्धि नहीं थी- शास्त्रों का अध्ययन किया सूत्र हाथ में आ भी गये तो कुछ नहीं होता। अगर इन्हें कुंजी (चाबी) दे भी दें तो इनसे ताले तक कुंजी पहुँच नहीं पायेगी। जहां ताला नहीं है, वहीं कुंजी लगाते रहेंगे। इसीलिए हिन्दुओं ने अधूरा ज्ञान लिखा शक्ति के स्रोत छिपा के रखे। अभी पश्चिम में विचार चलता है कि विज्ञान की नई खोजें गुप्त रखी जायें। अब उनको प्रकट न किया जाये क्योंकि विज्ञान की नई खोजें अब खतरे की सीमा पर पहुँच गई हैं। वे बुरे आदमी के हाथ में पड़ सकती हैं। पड़ रही हैं क्योंकि राजनीतिज्ञ के हाथों में पड़ जाती हैं सारी खोज! इस बात की समझ पश्चिम को अब लगी-

पश्चिम हमेशा कहा करता है कि पूर्व के किसी ऋषि ने कोई लकीर पदचिन्ह नहीं छोड़े। कहां पैदा हुए। पूर्व में, पश्चिम में, उत्तर में या दक्षिण में कौन से गांव में कुछ पता नहीं, बस वो सूत्र उनके शक्तिशाली सूत्र इतनी ही सुगंध छोड़ गए हैं इतनी सुगंध काफी है। इन सूत्रों को खोलोगे तो भीतर भारत का ऋषि जो सोया है, जाग जायेगा। इसलिए पूरब के किसी मनीषी के संबंध में कुछ भी पता नहीं। पश्चिम के लोग हैरान होते हैं कि पूरब के लोगों को इतिहास लिखना नहीं आता- उनको यह नहीं मालूम कि पूर्व के लोग इतना लिखने के आदी रहे- सबसे पहले भाषाएं पूरब में जन्मीं, सबसे पहले किताबें पूरब में जन्मीं। सबसे पहले पूरब में लिखावट पैदा हुई। सबसे

पुरानी किताबें पूरब के पास हैं- तो जिन्होंने वेद लिखे, उपनिषद् लिखे, गीता लिखी। चाह कर भी इतिहास नहीं लिखा- किसका इतिहास लिखें ? बबूलों का इतिहास, इंद्र धनुषों का इतिहास, मृगमरिचिकाओं का इतिहास, नहीं-पूरब ने पुराण लिखा, इतिहास नहीं लिखा। पुराण बड़ी और बात है पश्चिम में पुराण जैसी कोई चीज है ही नहीं।

पुराण क्या है ?

एक सिकंदर हुआ। दूसरा, तीसरा सिकंदरों पर सिकंदर हुए जो धन के पीछे पागल हुआ। करोड़ों लोग धन के पीछे पागल हुए हैं। अब क्या सबका इतिहास लिखें। धन के पागलपन की बात हमने एक कहानी में निचोड़ कर रख ली- उसको हम पुराण कहते हैं।

पुराण का मतलब है, ऐसा कभी हुआ नहीं है, लेकिन ऐसा ही हो रहा है चारों तरफ उसमें से सार निचोड़ लिया है, संक्षिप्त निकाल लिया है, सूत्र बना लिया है। उस सूत्र को हमने लिखा है। अगर कोई खोजने जाए तो वैसा ठीक ठाक कभी न हुआ। पश्चिम के पास ऐसी दृष्टि नहीं है। वे पूछते हैं इतिहास के बारे में हम लिखते हैं पुराण। शांडिल्य की हमने फिक्र नहीं की। क्या सार है। असार में क्या सार हमारे पास ऋषियों के सूत्र हैं। सूत्रों में ही ऋषि को खोजो- सूत्रों से बाहर नहीं। सूत्रों में भारत के ऋषि को पकड़ो। सूत्रों में ही उनकी उपस्थिति है क्योंकि यह उनके प्राण और उनकी प्रज्ञा है। यह उनका अनुभव है। यह उनकी जीवंत प्रतीति है। यह सूत्र ऐसे नहीं है कि किसी लेखक ने लिखे हैं। उन ऋषियों ने जीए हैं। यह भेद है ऋषि और कवि में कवि हम उसको कहते हैं जिसने जीया नहीं और गाया है। ऋषि हम उसको कहते हैं जिसने जीया और गाया, जो जीया, वही गाया ; जैसा जीया वैसा ही गाया और जिसने जाना तो, कहा उसको ऋषि कहते हैं। ऋषि को ढूंढ़ने के लिए अगर चाबी चाहिए तो उनके सूत्रों में डुबकी लगा लेना और उनका परिचय मिल जायेगा।

०००

जीवन का दीया

बालवत एक शब्द है - बालवत यानि बालक - बच्चा जैसा अज्ञानी 'जीसस' के प्रसिद्ध वचन है... एक बार बाज़ार में किसी ने पूछा कि प्रभु के दरबार में कौन पहुँचेगा.. तो चारों ओर नजर दौड़ाई सामने भीड़ में धनवान मान से भरपूर नामी सेठ खड़े थे, पंडित पुरोहित भी खड़े थे और दूर भीड़ से परे एक दलित जाति का कुम्हार अपने बेटे को लेकर जा रहा था। बड़े बड़े दानी ज्ञानी उन्होंने सोचा कि जीसिस हमारी ओर शायद इशारा करेंगे। लेकिन जीसिस ने उस छोटे बालक को कंधें पर उठा लिया और कहा जो इस बच्चे की तरह होंगे वो पहुँचेंगे प्रभु के दरबार में प्रभु के राज्य में प्रवेश करेंगे। यह नहीं कहा कि बच्चे प्रवेश करेंगे। बच्चे की भांति।

बालवत यानि बालक अज्ञानी है, ज्ञानी भी है। ज्ञानी कुछ जानता नहीं है। जितना परमात्मा जना देता है, बस ठीक। ज्ञानी अपनी तरफ से नहीं जानता। ज्ञानी पंडित नहीं है। पंडित कभी ज्ञानी नहीं हो पाता, पापी शायद प्रभु के राज्य में पहुँच जाये पर पंडित कभी नहीं पहुँचता भटकता रह जाता है। पंडित में एक दम्भ होता है कि मैं जनता हूँ पापी सिर पटकता है प्रुभ मैं पापी हूँ मेरा उद्धार करो। और ज्ञानी की इतना ही बोध होता है कि मैं क्या जानता हूँ? मैं हूँ ही नहीं, जानूंगा कैसे ? जानना कहां संभव है। ज्ञानी ही बालवत है। उसने अपने अज्ञान का स्वीकार कर लिया है। हे भगवान मेरे पास न आंख है न कान न मेरे पास प्रतिभा है आपकी मेरे पास मेरा अपना कुछ भी नहीं है। मेरे पास अपना तो कुछ भी नहीं है। मैं सिफर हूँ। तुम इस शून्य से जितने प्रगट हो जाआगे उतना ही मैं प्रगट होने लगुगां - तुम ही प्रगट हो रहे हो। सुकरात ने कहा जिस दिन मैंने जाना कि मैं कुछ भी नहीं जानता उसी दिन

पहली किरण उतरी उपनिषद् कहते है कि जो कहे मैं जानता हूँ जान लेना नहीं जानता - जानने का दम केवल उन्हीं में होता है जिन्हें अभी कुछ भी पता नहीं चला है, यह अज्ञान का हिस्सा है। सो बच्चा अज्ञानी है। लेकिन उसे अपने ज्ञान का पता चल गया है बच्चे को कुछ भी पता नहीं है। बच्चा अज्ञानी है, सोया हुआ है, ज्ञानी जागा हुआ है। बच्चे को कुछ भी पता नहीं है इसलिए वो जल्दी ही चक्कर में पड़ेगा। जैसे जैसे उसे पता चलता है कि अब मैं जानने लगा हूँ अब इतना जान लिया है। स्कूल कालेज यूनिवर्सिटी से सीख के आ गया है।

उसी तरह उच्चकोटि के ब्राह्मण का लड़का गुरूकुल से सब शास्त्रों को जान कर घर लोटा, बेद पुराण सब कंठस्थ करके लौटा था। बाप ने देखा बेटा बड़ी अकड़ से चला आ रहा है। बाप की आंखों में आंसू आ गये - क्योंकि वो अकड़ के आ रहा था। ज्ञानी में अकड़ कैसी ? ज्ञानी तो विनम्र होता। लेकिन वो तो गुरूकुल में प्रथम आया था। उसने बहुत से पुरस्कार जीते थे। सब शास्त्रों को जाना। सोचा था बाप उठ कर गले लगायेगा। पीठ थपथपायेगा। लेकिन बाप उदास बैठ गये जब वो सामने आकर खड़ा हुआ तो उसकी अकड़ ऐसी थी कि बाप के पैर भी छू न सका। अब क्या छूये। बाप तो अज्ञानी है। मैं ज्ञानी हो कर लौटा हूँ। बाप ने पूछा- बेटा - तुमने वह जाना जिसको जानने के लिए सब जान लिया जाता है। बेटे ने कहा, कौन सी बात कही? यह किसी पाठ्यक्रम में था ही नहीं। वह जिसे जानने से सब जान लिया जाता है। उसकी तो गुरू ने बात ही नहीं की। मैंने वेद, पुराण, इतिहास, भाषा व्याकरण सब जाना जो-जो था सब जान कर आ रहा हूँ। यह बात तो उठी ही नहीं कि उस 'एक' को जानना जिसे जानने से सब जान लिया जाता हैं। बाप ने कहा, तू वापिस जा। क्योंकि हमारे घर में नाम के ही ब्राहाण नहीं रहे। हमने ब्रहा को चखा है। तूं जा खोज कर उस एक की। एक ज्ञान है जो हम बाहर से इकट्ठा कर लेते हैं। वो ज्ञान बाहर का ही रहता है। वह कभी भीतर नहीं बनेगा उधार है उधार ही रहेगा। बेटा एक को जानना है वह जो एक भीतर छिपा है उसको

जानना है। उसको जानने से ही सब जान लिया जाता है। आज हर बच्चा स्कूल यूनिवसर्टी से कागजी डिग्रियां, ज्ञान उपाधियां इकट्ठी करेगा - वो तो भटकेगा। उस एक को जानने से द्वंद्व मिट जाता है फिर दो के बीच चुनाव नहीं रह जाता। अचुनाव पैदा होता है। उस अचुनाव में ही आनंद है सच्चिदानंद है। इसलिए तूं जा अपने गुरू के पास और उस एक को जान - के आ।

बाप ने वापिस उसे गुरू के पास भेजा। गुरू ने कहा इतनी देर तू मेरे पास रहा अब तूं ऐसा कर तूं राजा जनक के पास चला जा उसने कहा आप जैसे महाज्ञानी को छोड़ कर मैं राजा जनक जैसे अज्ञानी के पास चला जाऊँ। वो महलों में रहता है, वेश्याओं के नृत्य देखता है, आप कहां भेज रहे हैं मुझे लेकिन गुरू ने कहा, तू जा। वो बेमन से गया। क्योंकि गुरु की आज्ञा थी, आज्ञावश गया। मन में तो राजा के लिए निंदा थी। अरे उससे ज्यादा मैं जानता हूँ। जब वह वहां पहुँचा तो देखा जनक बैठे थे, वेश्यायें नृत्य कर रही थीं दरबारी शराब डाल रहे थे। वह तो बहुत नाराज हो गया। उसने जनक को कहा, महाराज, मेरे गुरू ने भेजा है, इसलिए आ गया हूँ। भूल हो गई है, क्योंकि उन्होंने आपके पास भेजा, किस पाप का दंड़ दिया है। मैं नहीं जानता लेकिन अब आ गया हूँ तो आपसे पूछना है कि यह अफवाह आपने किस भांति उड़ा दी है कि आप ज्ञान को उपलब्ध हो गये हैं। यहां क्या हो रहा है। यह राग रंग इतना बड़ा साम्राज्य धन दौलत इतना बड़ा महल यह सारी व्यवस्था, इस सबके बीच में आप बैठे हैं तो ज्ञान को उपलब्ध कैसे हो सकते हैं। त्यागी भी ज्ञान को उपलब्ध हो सकता है

जनक ने कहा, तुम जरा बेवक्त आ गये हो। यह सत्संग का समय नहीं है। तुम एक काम करो - यह दीया ले लो - पास रखे एक दीये को दीया और कहा - तुम पूरे महल का चक्कर लगा आओ। एक एक कमरे में हो आना, पर ध्यान रखना कि दीया न बुझ पाये। अगर दीया बुझ गया तो फिर लौट न सकोगे। विशाल महल है। भटक जाओगे दीया न बुझे। जब तक तुम लौटोगे मैं भी फुरसत में हो जाऊँगा फिर सत्संग करेंगे। वह युवक दीया लेकर

महल देखने चला उसने पहले महल देखे नहीं थे उसकी जान बड़ी मुसीबत में फंस गई। वैसे भी यह महल बड़ा तिलिस्मी है, इसकी खबरें उसने सुनी थी कि इस में लोग खो जाते हैं और अगर दीया बुझ गया तो जान पर आ बनेगी। ऐसे ही संसार में भटके हैं, और संसार के भीतर यह और एक झंझट खड़ी हो गई। अभी संसार से ही नहीं छूटे थे और एक और मुसीबत आ गई।

लेकिन जब जनक ने कहा है और गुरू ने भेजा है तो वह दीये को लेकर महल देखने गया बड़ा डरता - डरता गया महल बहुत सुंदर था। महल में सुंदर चित्र थे सुंदर मूर्तियां थीं सुंदर कालीन थे। लेकिन कुछ दिखाई नहीं पड़ता वह एक ही चीज देख रहा है कि दीया न बुझ जाये। वह दीये को संभाले हुए है। और महल का चक्कर लगा कर आया तब निश्चिंत हुआ दीया रखकर उसने कहा कि महाराज, बचे। जान बची तो लाखों पाये। बुद्धू लौट घर को आये। यह तो एक जान पर ऐसी मुसीबत हो गई, हम फकीर आदमी और यह महल जरूर उपद्रव है, मगर दीये ने बचाया।

राजा जनक ने कहा, छोड़ो दीये की बात यह बताओ, कैसा लगा महल ? उसने कहा किसको फुरसत थी देखने की ? जान पर फंसी थी जान पर आ गई थी, दीया देखें कि महल देखे? कुछ देखा नहीं राजा ने कहा, ऐसा करो, अब आ ही गये हो तो रात रुक जाओ। सुबह सत्संग करेंगे। तुम भी थके हो इस महल के चक्कर ने भी थका दिया है। और मैं भी थक गया हूँ। बड़े सुंदर भवन में बहुमूल्य शैय्या पर उसे सुला दिया। और जाते समय राजा ने कहा कि उपर ख्याल रखना एक तलवार ऊपर लटकी है। और पतले धागे से बंधी है - शायद कच्चे धागे में बंधी है कहीं गिर न जाये। और तलवार में एक खूबी है कि नींद लगी, कि यह गिरी। उसने कहा, क्यों फंसा रहे हो झंझट में मुझे? दिन भर का थका मांदा जंगल से चल कर आया, यह महल का उपद्रव और अब यह तलवार। सम्राट ने कहा, यह हमारी यहां की व्यवस्था है मेहमान आता है तो उसका सब तरह का स्वागत करना।

रात भर पड़ा रहा और तलवार देखता रहा। एक क्षण को पलक झपकने तक मे घबराये। कि कहीं तलवार ने समझ लिया कि मैं सो गया हूँ और वो टपक पड़े, तो जान गई। सुबह जब राजा ने पूछा तो वह तो आधा हो गया था सूख कर, कि कैसी रही रात? बिस्तर ठीक था।

उसने कहा, कहां की बातें कर रहे हो। कैसा बिस्तर ? हम तो अपने में झोंपड़े में जंगल में पड़े रहते थे वही सुखद था। ये तो बडी झंझटो की बातें हैं। रात को एक दीया पकड़ा दिया कि अगर बुझ जाये तो खो जाओगे। अब यह तलवार लटका दी। रात भर सो भी न सका। कहीं आंख लग जाये उठ उठ कर बैठ जाता था। डर बना रहता था कि झपकी आ रही है कि तलवार टूट जाये। कच्चे धागे में लटकी है। गरीब आदमी हूँ कहां मुझे फंसा दिया। मुझे जाने दो। मैं सत्संग नहीं कोई करना।

सम्राट ने कहा अब आ गये हो तो भोजन करके जाना। और अब एक बात बता दूँ तुम्हारे गुरू का संदेश आया है कि अगर तुम्हें सत्संग में सत्य का बोध न हो सके तो जान से हाथ धो बैठोगे। शाम को सूली लगवा देंगे। सत्संग में बोध होना ही चाहिए।

उसने कहा, यह क्या मामला है ? अब सत्संग मे बोध होना चाहिए यह भी कोई मजबूरी है? हो गया तो हो गया, नहीं हुआ तो नहीं हुआ। यह मामला है .... तुम्हें राजाओं का हिसाब नहीं मालूम। तुम्हारे गुरू की आज्ञा है हो गया बोध तो ठीक नहीं हुआ बोध तो शाम को सूली लग जायेगी।

अब वो भोजन करने बैठा। बड़ा सुस्वाद भोजन है, सब है, मगर कहां स्वाद ? अब यह घबराहट कि तीस साल गुरू के पास रहे तब बोध नहीं हुआ इसके पास एक सत्संग में बोध होगा कैसे? किसी तरह भोजन कर लिया। सम्राट ने पूछा, स्वाद कैसा रहा – भोजन ठीक ठाक था ? उसने कहा आप छोड़ो। किसी तरह यहां से बच कर निकल जाऊं, बस इतनी प्रार्थना है। अब सत्संग हमें करना ही नहीं सम्राट ने कहा, बस इतना ही सत्संग है कि जैसे रात तुम दीया लेकर

घूमे और बुझने का डर था तो महल का सुख न भोग पाये, ऐसा ही मैं जानता हूँ कि यह दीया तो बुझेगा, यह जीवन का दीया बुझेगा। यह बुझने ही वाला है। और फिर मौत के अंधकार में भटकन हो जायेगी इसके पहले कि दीया बुझे, जीवन को समझ लेना जरूरी है। में हूँ महल में, महल मुझ में नहीं हैं।

रात देखा, तलवार लटकी थी तो तुम सो न पाये। और तलवार तो प्रतिपल लटकी है। तुम पर ही लटकी नहीं, हरेक पर लटकी है। मौत हर एक पर लटकी है। और किसी भी दिन, कच्चा धागा है किसी भी क्षण टूट सकता है और मौत कभी भी घट सकती है। जहां मौत सुगमता से घट सकती है वहां कौन उलझेगा राग रंग में बैठता हूँ राग-रंग में, उलझता नहीं हूँ। अब तुमने इतना सुंदर भोजन किया लेकिन तुम्हें स्वाद न आया। ऐसा ही मुझे भी। यह सब चल रहा है, लेकिन इसका स्वाद नहीं है मैं अपने भीतर जागा हूँ। मैं अपने भीतर केदीये को सम्हाले हूँ। मैं मौत की तलवार को लटकती देख रहा हूँ फांसी होने को है। यह जीवन का पाठ अगर न सीखा, अगर इस सत्संग का लाभ न लिया तो मौत तो आने को है मौत के पहले कुछ ऐसा पा लेना है जिसे मौत न छीन सके। कुछ ऐसा पा लेना है जो अमृत है। इसलिए यहां हूँ सब, लेकिन उससे कुछ भेद नहीं पड़ता यह जो जनक ने कहा महल में हूँ महल मुझमें नहीं है, संसार में हूँ संसार मुझ में नहीं है, यह ज्ञानी का परम लक्षण है वह कर्म करता हुआ भी किसी से लिप्त नहीं होता। जैसे तुम मन के पार हुए, एक रस हुये। मन में अनेक रस हैं, मन के पार एक रस है और एक रस आनंद का दूसरा नाम है। जीवन में एक रस उसी के साथ हो सकता है, जो एक है, तुम्हारे भीतर साक्षी बन कर बैठा है उस एक को जान कर जीवन सफल हो सकता है दीया जलता रहे तो मन के महल में भटक नहीं पाओगे। बस इतनी सी बात है सार कि जिसे समझ लग गई फिर उसे न कही जाना हैं न तप जप योग न कोई स्वर्ग न कोई परमात्मा कुछ भी नहीं करना है। भीतर जानना है अपने को ही जानना है कि मैं कौन हूँ।

०००

पिता का नाम	:	पं. देवदत्त शर्मा (भूतपूर्व विधायक)
पति का नाम	:	हरबंस लाल सांगड़ा
शिक्षा	:	ग्रेजूएशन



संतोष सांगड़ा

अभिनय क्षेत्र में सिद्धहस्त कलाकार

1. 1976 से रेडियो कश्मीर जम्मू से नाटकों में अभिनय कर रही हैं। 15,000 नाटकों को वाचित अभिनय के माध्यम से श्रोताओं तक पहुँचा रही हैं।
2. 1982 से श्रीनगर दूरदर्शन में 70 से अधिक टी.वी. सीरियल, टी.वी. फिल्मों में काम कर रही हैं।
3. बड़े परदे पर 5 फिल्मों में सक्रिय भूमिका निभाई-लकीर (पुंछी में), घुग्गी मार डुआरी (डोगरी), जिद्धी माही (पंजाबी में)।
4. जे. एंड के. अकादमी आर्ट कल्चर एंड लैंग्वेजिज़ में 1980 से स्टेज के माध्यम से सक्रिय भूमिका निभाई और डेढ़ दर्जन नाटकों में वेस्ट एक्ट्रैस के रूप में पुरस्कृत भी किया गया। हिन्दी, उर्दू, पहाड़ी, पुन्छी, डोगरी, बंगला में 200 नाटकों को मंचित किया।
5. लेखन क्षेत्र में-

   2011 में (काली गंगा-क्हानी संग्रैह्-डोगरी)

   2016 में (अंत:करण दी कैद-क्हानी संग्रैह्-डोगरी)

   2017 में (विचार औषध-निबंध-हिन्दी में)

   2018 में (दूरै दा रिश्ता-6 नाटक संग्रैह्-डोगरी में)

   2022 में (कोऽहम-निबंध-हिन्दी में)

   2022 में (मेनहोल-क्हानी संग्रैह्-डोगरी में)

कश्मीर टाइमज़, आयकर विभाग, गंगा संग्रह में रचना प्रकाशित होती रही। अपनी कहानी पर आधारित-''लम्मी डुआरी'' और ''इक परछामा बद्दली दा'', प्रो० मदन मोहन शर्मा जी के नाटक का दो-दो ऐपिसोड जम्मू दूरदर्शन से प्रसारित हो चुके हैं।



Highbrow Publications

78/11, Bari Brahamana, Jammu

ISBN 978-93-92612-19-0

